कुण्डलियारामायण।

कविकुलतिलक गोस्वामी

तुलसीदासजीकृत।

कलकत्ता

३८।२ भवानीचरणदत्तष्ट्रीटस्थित

वङ्गवासी ष्टीममेशीन प्रेसमें

श्रीनुटविहारीराय द्वारा

मुद्रित और प्रकाशित।

सन् १९०३ ई०।

कुण्डलिया रामायण॥



दहन अमङ्गल सकल दुख गजमुख सबसुखदानि। मतिग-तिरति रघुपतिचरण विघ्नहरनकी बानि॥ विघ्नहरनकी बानि जानि सज्जन सब गावत। भक्ति मुक्ति वर देव शेष शङ्करसुर ध्यावत॥ शङ्कर ध्यावत शेष सुर रिपुगण खलजन गहन। कह तुलसिदास शङ्करसुवन भजत भक्त भवभयदहन॥ १॥

दीनदयाल दया करो दीन जानि शिव मोहिं। सीताराम सनेह उर सहज सन्त गुण होहिं॥ सहज सन्त गुण होहिं यथाप्रद लाभ दुःखसुख। कर्मविवश जहँ जाउँ तहाँ सियराम कृपारुख॥ रामकृपारुख नित रहौं जगतजनित संशय हरो। कह तुलसिदास शङ्कर उमा दीनदयाल दया करो॥२॥

रामचरित शतकोटि शेष शारद शिव भाखे। नारद शुक सन-कादि वेद कहि बीचहि राखे॥ बीचहि राखे चरित पार कहि पावत नाहिन। कहि कहि हारे सकल रामयश कहत सिरा-हिन॥ नहिं सिराहिं रघुबीरगुण सो तुलसी मनमें डरत। भजन भाव वेदन कहा कहे चरित भवनिधि तरत॥ ३॥

पुत्रयज्ञ नृप कीन जोरि मुनिगण द्विजकुलवर। कह वशिष्ठ मैं सिद्ध कीन हवि लै प्रसाद कर॥ लै प्रसाद कर दीन देहु भामिनि नृप जाई। सुनि दशरथमन हर्ष सकल प्रियनारि बुलाई॥ नारि बुलाई कौशला केकेयी युग भाग कर। मन अनन्द रानी नृपति दीन्ह सुमित्रहि हाथ धर॥ ४॥

मङ्गलमयी विचित्र द्युति प्रकट भई गृह आनि। ब्रह्म-सच्चिदानन्द उर प्रकट भये सुखखानि॥ प्रकट भये सुखखानि हानि दारिद दुख नाश्यो। देवन लह्यो अनन्द मह्यो मन मोद प्रकाश्यो॥ मह्यो मोद द्विज सकल सन्त सज्जन यश गावत। ब्रह्मादिक सब देव अवधपुरपथ चलि आवत॥ आवत वर्षत सुमन धन तुलसी कहि जय जय जई। नाक नगर अहिपुर भुवन प्रकट भई मङ्गलमई॥ ५॥

मास भयो शुभवार योगवर नखत विराजत। तिथि नभ जल महि विमल दिशा विदिशा सब भ्राजत॥ भ्राजत सरयू अवध देवगण जय उच्चारत। वर्षत सुमन प्रशंस हंस निजवंस निहारत॥ हारत खलगण मनमलिन प्रकट भये सुख दुख गयो। तुलसी रघुबर प्रकट भे मास एकको दिन भयो॥ ६॥

सुनि भूपति सुतजन्म मगन नहिं देह सँभारत। उठे भवन कहँ दौरि बोलि तब गुरहि प्रचारत॥ गुरहि प्रचारत चले विप्र सँग लै मुनिनायक। भूत भविष्य वर्त्तमान ज्ञान सब जानन लायक॥ लायक सुत मुनि समुझि कै जातकर्म सब विधि कियो। हेम हीर नीरज सुपट महि हय गय भूपति दियो॥ ७॥

याचक जो जेहि काज ताहि न्रप पूछि दिवावत। वृन्द वृन्द वर नारि विमल स्वर सोहिल गावत॥ गावत सोहिल सुनत भूप हँसि हेरि बुलावत। पट भूषण मणिमाल लाल सुख नेहि पहिरावत॥ पहिरावत गज तुरग रथ सर्वस दे दै छाँड़ि छल। पुनि तुलसी जहँ तहँ भरो रामकृपा सब वाहि थल॥ ८॥

पुरी मगन नर नारि वर्ण चारिउ प्रसन्न सबि। प्रति गृह गावत गीत कलस मणिचौक भरी छबि॥ भरी चौक गजमुक्त अगर कुमकुम मृगमद घन। कुसुम सुगन्ध अबीर रहेउ भरि दिशा विदिशि तन॥ दिशा विदिशि सुख भरि रह्यो आमिनि

बहु प्रकटी दुरी। अहिनाक भूमितल सुख भरयो जिमि सुख भो रघुपतिपुरी ॥ ९ ॥

भूप भामिनी दोउ सुखद सुन्दर सुख जाये। कर्म क्रिया सो करे तोषि याचक पहिराये ॥ पहिराये मन मोद चारिसुत लखि सुख राजा। रानी परमहुलास दास दासी सब साजा ॥ साजा शहर अनन्द बड़ बाजा बहु बाजन लगे। सब कोउ कहत सराहिकै भागभाल सुखके जगे ॥ १० ॥

भूसुर सुर गोधरनि सन्त सज्जनके काजे। प्रभु धारयो तन मनुज दनुज सुनि विकल सुलाजे ॥ लाजे खलगण मलिननलिनद्विज उदय भानुकर। अघउलूक छपि गये तेज अहिपुर सुरपुरधर ॥ सुरपुरधुनि कुसुमावली जयति राम रघुवंश जय। जय दशरथकुलकलश अवधनरनारि कहत भय ॥ ११ ॥

गृह गृह बजत बधाव नारि नर अवध अनन्दित। चौक कलश प्रतिद्वार लसत सुरतियगण वन्दित ॥ वन्दत सुरगण सुमुख बन्दिगण विप्रवेदधुनि। भरि भरि मुक्ताथार देखि सुत भाग अधिक गुनि ॥ अधिक गान सोहत भवन रामजन्म मङ्गल सजत। नरनारि वारि तन धन सबै सुरपुर जयदुन्दुभि वजत ॥ १२ ॥

नाम धरयो मुनि हेरि राम पुनि भरत लषणवर। शत्रुघ्नन शुभनाम दीन मुनि लिखि भूपति कर ॥ भूपति रानिन दीन मगन तनु लहेउ सकल सुख। गान निशान समान धरणि आकाश एक रुख ॥ यकटक निरखत सुमनगण मन मलीन खलगण भये। चारि चारु सुन्दर सुवन सुकृत भूप तरुफल नये ॥ १३ ॥

सुन्दर सुतवर गोद मोद भरि मातु दुलारत। निरखि दनव छविसिन्धु सकल तन मन धन वारत ॥ वारे तनमन देव भूपके

भाग्य सराहत। शिव सनकादिक ब्रह्म चराहिस्या मनसुख चाहत॥ चाहत नित आवत अवध मङ्गलमय मूरति लखत। रामजन्मसुखरसरसिक तुलसिदास नयननि चखत॥ १४॥

माई बालक अनरत्यो दूध पियत नहिं आजु। रोवत सोवत नैक्ष नहिं दुष्ट नजरिको साजु॥ दुष्ट नजरिको साजु रहैं नहिं बैठे ठाढ़े। बड़ो शोच उर भयो नीर नयननते बाढ़े॥ बाढ़े करुणा कौशलहि झाय दिवावत धायकै। पालन गोद पिआय पय राम सोवावत गायकैं॥ १५॥

श्वश्रू धाय्यो अवध पग अङ्गहि भस्म लगाय। रामचन्द्र-सुखसुधाकर चितचकोर ललचाय॥ चितचकोर ललचाय नाद भृङ्गीको कीन्हे। घर घर आगम कहत बोलि कौशल्या लीन्हे॥ कौशल्या गृह बोलिकैं शुभ आसन आदर कर्यो। सुत पाँयनलर लाय माय हाथ श्वश्रू धर्यो॥ १६॥

साँई आके शुभ कहौ जो कछु यामें होय। सब गति जानत सबहिकी तुमहिं कहत सब कोय॥ सब कोई परचो कहत बड़े योगनिधि योगी। जो सँगिहौ देहौं सोइ तोको करौं सुधाको भोगी॥ करौ सुधाको भोग जन्म भरि राम लषणके पाछे। सुनि सुनि बचन हँसत मन शङ्कर मातु बचन सुनि आछे॥१७॥

माई बालक तोर यह बड़ो भागको मूल। याके दर्शन जात है सब अन्तरको शूल॥ सब अन्तरको शूल हरौ याते सुख पैहौ। कछु दिन बीते सुनौ एक मुनि सँग करि दैहौ॥ दैहौ मुनि सँग जाय ब्याह पुनि पातौ आई। दशरथ सुवन बिवाहि सहित घर ऐहैं माई॥ १८॥

अद्भुत कर्मन करौ सकल खलगण संहारन। महि द्विज पालहि सन्त शोच सुर करहि निवारन॥ करहि निवारन दोष मातुपितु आज्ञाकारी। तोरहि शिवको धनुष सुयश तिहुँ पुर

बिस्तारी ॥ बिस्तारी सुख सम्पदा सुनु कौशल्या तोर सुत। वचन मृषा बोलत नहीं मातु प्रतीति सनेहयुत ॥ १९ ॥

कह्यो केकयी सुवनको लच्छण सबकर देखि। कौशल्या-सुतभक्त यह मन क्रम वचन विशेखि ॥ मन क्रम वचन विशेषि रामपद प्रीति सुहावन। सोवत जागत ध्यान नाम रसना रसपावन ॥ पावन तिरहुति व्याहि हैं याते सुखसम्पति लहो। सुयशसिन्धु साँचो सुवन सत्तुघ्नि रेख आगम कहो ॥ २० ॥

सुनहु लषणकी मातु सुलच्छण सुवन तुम्हारे। निज भाइनसों प्रीति प्रबल रणके जितवारे ॥ जितवारे बल बाहु गुणनि पूरे सब भाई। राम सङ्ग शुभपुरी तहाँ सब होहिं सगाई ॥ होहिं सगाई जनकपुर जनककन्यका आनिकै। सत्य जानु रानी वचन झूँठ न कहौं वखानिकै ॥ २१ ॥

सुनती मन रानी मगन मुक्ता थार भराय। लेन कह्यो हँसि कौशला रामहिं दीन छुवाय ॥ रामहिं दीन छुवाय हाथ धरि देउ अशीशा। बालक रहु कल्याण डीठि मुठि डारहु खीशा ॥ खीस करहु प्रभु रोग सकल मन्त्रन पढ़ि बानी। बोली डारे सुवन हाथ जोरे सब रानी ॥ २२ ॥

बोल्यो योगी योगनिधि सुनहु कौशलामाय। डीठि मूठि अनखानि अब देहौं सकल बहाय ॥ देहौं सकल बहाय बाल कबहूं नहिं रोई। पलका गोद हिंडोर सुमुख सब थल शिशु सोई ॥ सब थल शिशु सुख रही होय नहिं कबहूं रोगी ॥ भृङ्गी शब्द सुनाय चल्यो मन हँसिकरि योगी ॥ २३ ॥

भूपति रानी मन मगन शिशु सब अतुल निहारि। गोद मोद मन गावती राम दुलारि दुलारि॥ राम दुलारि दुलारि वारि तन मन सब डारैं। चौरकर्मको सुदिन बैठि कुलगुरुहि हँकारैं ॥

गुरुहि हँकारि बिवेक सुफल करि मङ्गलबानी। गावहिं गीत विचित्र मोदमय भूपति रानी ॥ २४ ॥

सन्तोषे माँगन सकल गुरु लिय द्विज पहिराय। बालक कोशलपालके चिरञ्जीव सब आय ॥ चिरञ्जीव सब आय देत आशिष अनुकूले। नृप रानीके सुकृत सुतरु कहे अरु फूले ॥ फूले अवध नारिनर ते अति आनँद पोषे। नाक नगर अहि-नगर नारिनर मनवाँछित सब तोषे ॥ २५ ॥

आँगन रानी चलन सिखावत चारयो सुत कर लाय। गिरत परत उठि चलत हँसत पुनि रोवत रहत रिसाय ॥ रोवत रहत रिसाय आँगुली टोपी डारैं। मुक्तनमाल विदारि नयन भरि नीर निहारैं ॥ नीर निहारैं हँसत सुनत अति तोतरि बानी। भजत भवनको पैठि धरत लै आँगन रानी ॥ २६ ॥

भूप हर्षि करवायो रुचिसों करणबेध उपवीत। छोटे धनुष बाण कर लीन्हे समुझन लागे नीत ॥ समुझन लागे नीति वेद विद्या गुरु दीन्ही। धर्म कर्म गति अगति स्मृति श्रुतिमग जेहि कीन्ही ॥ श्रुतिमग जेहि कीन्ही जगत जाहि सिखाये सब सिख्यो। धर्म प्रकट जग करनको परब्रह्म नृप घर वस्यो ॥ २७ ॥

जाके नामप्रभावते जन्ममरणदुख जाय। वेद शेष शारद शिवा शिवको अगम दिखाय ॥ शिवको अगम देखाय भेद ब्रह्म-हु नहिं पायो। भक्तनके हित सोय कौशला उरमहँ आयो ॥ कौशल्या के उर बसि दशरथसुत कहि गावते। काम क्रोध मद लोभ दुख नाशै नामप्रभावते ॥ २८ ॥

विश्वामित्र महाश्रय विपिन बसैं मुनि सङ्ग। योगयज्ञ होमादि व्रत करत दनुज खल भङ्ग ॥ करत दनुज खल भङ्ग हृदय मुनि मन्त्र विचारयो। हरि अवतरे सुअवध हरन महि-

आरन भारयो॥ भारयो सुख उपजायके हरि होई नयननि विषय। सरयूसरि स्नान करि गे दरबार महाऋषय॥ २९॥

सुनि राजा सहसा उठे मिले धाय परि पाँय। लै आये भीतर भवन शुभ आसन बैठाय॥ शुभ आसन बैठाय नारि युत मुनिवर पूजे। उदय भयो निज भाग मोहि सम सुकृत न दूजे॥ दूजे आपुन जानिये पदरजको सेवक सदा। कहिय कृपा करि काज निज करहु तुरत मङ्गलप्रदा॥ ३०॥

सुनि भूपति द्विज मित्र गाय महिशोच निवारण। मम आश्रय खल दनुज करत उतपात अपारन॥ पार न पावहि मुनि विकल रयन दिवस सङ्कट परै। धर्मजात श्रुतिसेतु सकल बल खल हरै॥ हरै विपति दारुण जबै राम लषण जो देहु अति। तुम कहँ यश इनको सुफल गुनहु न मन सुनि भूमिपति॥ ३१॥

सुनतै राजा सूखि गो कमलवदन कुम्हिलान। नाहक मनि दाहयो हृदय माँगहि जीवन प्रान॥ माँगहि जीवन प्राण राम लक्ष्मण मिलि देऊ। जाहि निरखि रहै नयन पलक निरखत नहि लेऊ॥ लेउ अयश पातक सबै सुनि मुनि मनमें गुणि कहै। माँगहु तन धन धेनु महि राम दिये किमि तनु रहै॥ ३२॥

कह वशिष्ट राजा सुनहु सुत मुनिपतिकहँ देहु। इनको कृपा कृपालकी कुशल आय हैं गेहु॥ कुशल आय हैं गेहु दनुज सब करहिं सँहारन। सिद्ध शुद्ध करि होम सुयश जगमें विस्तारन॥ विस्तारन मङ्गल भुवन आन भाँति नहि मन गुनहु। सौंपहु विश्वामित्रको कह वशिष्ठ भूपति सुनहु॥ ३३॥

गुरु वशिष्ठके वचनको कैसे तजें नृपाल। राम लषणको बोलिके सौंपे मुनिहि कृपाल॥ सौंपे मुनिहि कृपाल शीश सब

सभा नवायो। कौशिक दियो अशीष मनहुं जप सफल पायो॥ पथ नहाय बारिजनयन उठे मौन धरि श्रवनको। उत्तर कछु न मुख कढ़यो गुरु बशिष्ठके बचनको॥ ३४॥

वेदमन्त्र दै सकल अङ्ग शस्त्रनके सारण। नींद भूख अरु प्यास त्रास सब अशुभनिवारण॥ अशुभनिवारण पन्थ सुपथ मङ्गलमय सुन्दर। बड़ो भाग निज समुझि करत आयसु प्रभु सादर॥ सादर पूछत वेदगति मृग तरु भूधर भूमितल। पाठ करावत गुण कहत वेदमन्त्र दै दै सकल॥ ३५॥

मारयो बीचहि ताड़का एक बाण श्रीराम। मुनि चितवत चकृत खड़े गई हर्षि सुरधाम॥ गई हर्षि सुरधाम रामको मुनि मन चीन्हे। आश्रम निज प्रभु पूछि यज्ञ आरम्भित कीन्हे॥ कीन्हे यज्ञ अरम्भ प्रभु धनु धरि बाण सुधारिकै। खल सुबाहु मारीच सँग धायो धूम निहारिकै॥ ३६॥

दल मारे सब लषण अनलशर जारि सुबाहे। प्रभु मारीचहिं उदधि पारकरि बाण चलाहे॥ बाण चलाहे अफल सुफल करि होमबिधानै। बर्षत सुर शुभ कुसुम अशीषत कृपानिधानै॥ कृपानिधानहि जानिकै यज्ञभाग दै अमियफल। धनुषयज्ञथल जनकके चले राम ऋषि त्यागि थल॥ ३७॥

गौतम ऋषिकी भामिनी तनपषाण जेहि ठौर। गये लषण रघुवंशमणि सुनि कौशिक शिरमौर॥ सुनि कौशिक शिरमौर पूछि बूझो सब कारण। दारुण दाह विचारि पाँव धरि कीन्ह निवारण॥ कीन निवारण पाँयको जय कहि उठि चलि दामिनी। तुलसी बिनती स्तुति करत गौतम ऋषिकी भामिनी॥ ३८॥

जय जय जगदातार प्रभु हरण घोर महिभार। दीनबन्धु दानव दहन सब गुण रूप उदार॥ सब गुण रूप उदार भजत

शिव शुक सनकादी। पावत थाह न चरित मध्य अन्तहु नहिं आदी॥ आदि जन्म जड़ कुकृतकारि भई आप पापमई। आजु परसि पदपद्मरज राम सुकृत मन्दिर भई॥ ३९॥

आपपापको दुर्ग कठिन रचि कर्मन राख्यो। मन बुधि चित इम छङ्गभरे अघवस्तुनि चाख्यो॥ वस्तु सकल मलराशि काम मद दम्भ सुभटघन। सुकृत सत्यरण जीति कर्मको अमल सबै तन॥ तन पग सुरगुण गाय प्रभु रजवत्तद रुख अनल गहि। रिपुहि सहित मम कर्म्म न्टप आप पापको दुर्ग दहि॥ ४०॥

अभिमत फलदातार देवतरुवर समकारन। कर्मकुमतिमल लाग कृपाकरि कौन निवारन॥ कौन निवारन पाप भई सुनि वरकी भामिनि। अब वर दीजिय मोहिं चरणरति दिन अरु यामिनि॥ दिन अरु यामिनि रत रहौं चरण हरण अहि-भार हो। तुलसिदास वर पाय कहि जय रघुपति दाता रहौ॥ ४१॥

लखि गति सुर मुनि हर्षि वर्षि शुभसुमन सराहत। अघ-रणभरण समर्थ घोर भवसिन्धु निबाहत॥ सिन्धु निबाहत अग-मसुगम बरदायक लायक। कुमति कुकर्म्म कुवेख कपट कलि-कलुषनघायक॥ कलुषनघायक राम प्रभु तुलसिदास भजि तजि करष। मन वच डर कर्मनि अजहु लखि गति सुर मुनिगन हरष॥ ४२

चले हर्षि मुनि सङ्ग रामलछण मगमाहीं। वन उपवन मृग विहँग विटप लखि पूंछत जाहीं॥ पूंछत मुनि सब कह-त न्हाय सुरसरि रघुराई। कहत कथा इतिहास जनकपुर पहुंचे जाई॥ पहुंचे प्रभुपुर निकट लखि बाग तड़ागनि अति भले। खग मृग मधुप समाजयुत जनकनगर देखन चले॥ ४३॥

बापी सुभग सरोजयुत सरवर विविध मराल। मानौ

अगणित मानसर शोभा देत विशाल ॥ शोभा देत विशाल विमल जलसुधा सपूरे । मणिगण पुरट बँधान नारिनर मज्जत भूरे ॥ मज्जत सुर मुनि आय जनु पर्व मानसर पाय जग। लहत चारिफलराशि जलनापी बापी सर सुभग ॥ ४४ ॥

सुन्दर चहुँ दिशि बाग बन कुसुमित फलित अपार। जनु सुरधरकी बाटिका बसी सहित परिवार ॥ बसी सहित परिवार कीरकोकिलधुनि राजै। पथिकन लेत बुलाय त्रिविध विधि पवन समाजै॥ पवन समाजै सुरभि सुख जनु वसन्त ऋतु गृह सघन। कह तुलसिदास प्रभुपुर निरखि सुन्दर चहुँ दिशि बाग बन ॥ ४५ ॥

परे नृपति सजि सेन मत्त गज रथ हय राजत। नृत्य गान सुख थान सुभग दुन्दुभि वर बाजत॥ बाजत बन्दी सूत यूथ यूथनि भट गाजैं। वनितादिक शुभ गान करहिं सुरतिय लखि लाजैं॥ लाजै लखि अमरावती सुरपुरकी शोभा हरे। विविध वृन्द इन्द्रादि सुर सेन साजि जनपुर परे ॥ ४६ ॥

धवल धाम चित्रनिखचित कलश मनहुँ रविज्योति ॥ जगमगात खम्भानि पुरट प्रकट दामिनी होति प्रकट दामिनी होति सोति मणि आलक झरोखनि। भामिनि भूषण सजत मनहुँ सुरतियतन धोखनि॥ धोखनि तन सुरबास सब धाम धाम सब थल नचति। जनकनगर छबिमय चकत हाट बाट मणिमय खचति ॥ ४७ ॥

सुनि श्रवन न नरपाल अभय आगमन अनन्दित। भूसुरवर गुरु ज्ञाति साथ मुनिपद शिर बन्दित॥ बन्दित नृपहि विलोकि मिले कौशिक मुनिनायक। भये बिदेह बिदेह निरखि दोउ सुत सब लायक॥ सब लायक रघुनाथ कहिं नरपति

निरखि विशालको। देखि आकुलभूपणाहि तनमनवश नर-
पालको ॥ ४८ ॥

विवशराव भये प्रेमवश निरखत तनशोभा। लोचन भये
चकोर रामसुखशशिरस लोभा ॥ लोभा सकल समाज
परस्पर चाहत रामै। धीरज धरि नृप कहत बूझि मुनि सब
गुणधामै ॥ सब गुण तेज प्रतापमय काके सुरतरुफल नये।
कहिय कृपाकरि कृपानिधि ये बालक काके भये ॥ ४९ ॥

कै मुनिभक्ति नृपभक्ति किधौं योग यज्ञफल आहिं। गण-
पति पशुपति लोकपति मम संशय मनमाहिं ॥ मम संशय
मनमाँहि ज्ञानगति गिराविनाशी। वरवस इनवश होत तजत
सुखरस अविनाशी ॥ अविनाशी अवलोकिये युगलरूप निज
सँगरधी। कहिय प्रकट सन्देह मन कै मुनिभक्ति नृपभक्ति
किधौ ॥ ५०

जपतप व्रतरतधर्म जगत जहँलगि शुभकर्मनि। दयाक्ष-
मा।दकनेमक्रिया आचार चार गनि ॥ चार वेद सब भेदयोग
सिधि साधत योगी। आतम अनुभवरूप ब्रह्मसुख पावत
भोगी ॥ पावत भोगी योगवश सो प्रकटत कबहुँक हिये। सो
फल मुनिनायक किधौं जप तपवलने प्रकट किये ॥ ५१ ॥

अलख अगोचर रूप हरि जो वरणत श्रुति शेष। जाके
हित विधि देव मुनि ध्यावत गणप महेश ॥ ध्यावत गणप महेश
योग वलन नहिं पावत। जपतपव्रत कृतकर्म धर्म धन हृदय
वसावत ॥ हृदय बसत वहुरूप जब सकल सिद्धि सब सुख भरि।
प्रकटो कौन सोइ रूप मुनि अलख अगोचर भूपहरि ॥ ५२ ॥

कीधौं मदन विशेष सँग मुनिनायक वश कौन। ऋषि
तपतेजप्रतापते सेवत पदलवलीन ॥ सेवत पदलवलीन
शत्रुको वैर सँभारयो। चाहत आपु सहाय मन्त मनमाँझ

निचारयो॥ चारयो विधि सेवासजे युगुलरूपछवि देखिये। बारम्बार भूपति कहैं सुनि मुनि मदन विशेषिये॥ ५३

सदा ज्ञान वैराग्यसों रह्योरहत मन मोर। ब्रह्म सच्चिदानन्दघन चितवत चन्द्र चकोर॥ चितवत चन्द्र चकोररूप हरि सुधलखि रानो। निरखत बालक नयन तीन सुख पात न जानो॥ जात न जानो ब्रह्मसुख छक्यो प्रेम अनुरागसों। सो मन इनके वश रह्यो लख्यो न ज्ञान विरागसों॥ ५४

सुनत भूपके प्रिय वचन पुलकि कहैं मुनिराज। जो कछु कह्यो सुसत्य सब तुम्हहि विदित सब काज॥ तुम्हहि विदित सब काज राज दशरथके जाये। मखरक्षित आवे माँगि आपुके नगर सिधाये॥ नगर सिधाये आपुके राम लषण धनुधर भरे। मखरक्षक भक्षक असुर सुनत भूप आनँद भरे॥ ५५॥

भाग जानि अनुराग नृप चले लिवाय निकेत। आदर आश्रम आनिके पूजे प्रेम समेत॥ पूजे प्रेम समेत निरखि नर नारि सुखारी। रघुकुलभूषण देखि सराहत सुकृत सँभारी॥ सुकृतपुञ्ज राजा जनक कहि पुर नर पद लागहीं। को जानै काके सुकृत राग भाग अनुरागहीं॥ ५६॥

कमलनयन श्रीरामछवि मरकतमणि घनश्याम। सुभग गौर लक्ष्मण वदन दामिनि वरण ललाम॥ दामिनि वरण ललाम अङ्ग अगणित छवि सोहैं। जनकनगर नरनारि चकित अद्भुत छवि जोहैं॥ जोहैं मन मोहैं सकल को है पावै पार कवि। तुलसिदास बैननि कहै कमलनयन श्रीरामछवि॥ ५७॥

देखे मुनिसँग आज री बालक युगल अनूप। श्यामगौरसुन्दर बदन मनहु मदन युगरूप॥ मनहु मदन युगरूप विरचि

विधि स्वकर बनाये। निज सूकृतके पुञ्ज जनकपुर देखन आये॥ देखन आये कुवँर दोउ विधि रचि राख्योकाज री। सियवरयोग्य संयोग यह समुझि देखु सहि आज री॥ ५८॥

अपर कहत सखि सत्य है एक कठिन हठिकर्म्म। प्रण विदेहको धनुष यह उठै न गिरिसमधर्म्म॥ उठै न गिरिते गरू बाल मृदु अतिसुकुमारे। सो असमञ्जस कठिन मेटि को योग सँवारे॥ साँवर कुवँर प्रतापवल मुनिगण कहत सुसत्य हैं। अस प्रताप विदेहको पुण्य भञ्जि धनु सत्य हैं॥ ५९

आयसु पाय मुनीशको और लषण रघुराय। सुमनहेत उपवन गये श्यामगोर दोउ भाय॥ श्यामगोर दोउभाय जानकी जाय निहारे। गिरिजापूजन हेत मध्य उपवन पग धारे॥ पग धारे नयननि लखे राजकुमार निहारिकै। सो सुख तुलसी कहै किमि कहि न जाय सुख चारिकै॥ ६०॥

रामसियाको मिलनसुख वेद न पावहिं पार। प्रीति प्रेमपरमिति सुमिति प्रीतमगति रतिसार॥ गतिरतिसार विचार कहत थकि रहत विचारी। सो मैं कहौं विवेक कवन मति गति संसारी॥ मतिगति शङ्कर शारदा कहि न सकत सुखसरसको। तुलसिदास केहि बिधि कहै रामसिया सुखदरशको॥ ६१॥

पूजि विविध विधि पाँय परि विनती सीय सुनाय। आदि अन्त लयलोक तू स्वबशविहारिणि माय॥ स्वबशविहारिणि माय मनोरथ जानति हीके। प्रकट प्रभाव प्रताप अगम बरदानि धीके॥ शची शारदा हरितिया सेय सेय सब सुकभरि। जय जय जय गिरिपतिसुता विविध विनय सियपायँ परि॥ ६२

वचन प्रसाद सुपाय सिय हर्षि चली निजधाम। सो छवि हृदय निरूपकरि गुरुपहँ गवने राम॥ गुरुपहँ गवने राम जानकी भवन सिधाई। सुमन दिये मुनि हाथ राम कहि कथा

सुनाई॥ कथा सुहाई सुनत मुनि सतानन्द आवत भये। जनकविनय कहि सोद लहि रामलषण आशिष दये॥ ६३॥

आजु भूप बनि बनि चले रङ्गभूमि शिरमौर। पावक पानी पवन महि सुर नर मुनि इकठौर॥ सुरनर मूनि इकठौर आपुको जनक बुलायो। कौतुक देखन चलिय सतानँद वचन सुनायो॥ वचन कहे मुनि रामसो चलहु तात अवसर भले। काको यश दशदिशि विदित आजु भूप बनि बनि चले॥ ६४॥

राम लषण कौशिक सहित सतानन्द भगवान। चले रङ्ग-भूमिहि सकल मङ्गलमोदनिधान॥ मङ्गलमोदनिधान नारिनर गृह तजि धाये। नगर बगरमें बात भूपसुत देखन आये॥ देखि जनक परि पगनि पूरि प्रेम आनँद लहित। आसन आदर देयकरि रामलषण कौशिक सहित॥ ६५॥

रामरूप न्टप देखिके द्युति मुखकी भइ छीन। रवि-प्रताप निरखत मनो उडुगनज्योति मलीन॥ उडुगनज्योति मलीन दीन बलहीन बिराजत। जड़खलदल दलमलेउ साधु सुर सज्जन गाजत॥ गाजत दुन्दुभि सुमन सुर मगन नारिनर पेखिके। थकित चकित पल नहि लगत रामरूप न्टप देखिके॥ ६६॥

जो जाके उर भावना देख्यो रामशरीर। कोउ शिशु कोउ प्रभु मित्र अरि स्वामि सखा बलबीर॥ स्वामि सखा बलबीर धीर धरि प्रभुहि निहारैं। वर्षत सुर शुभकुसुम देव मुनि जयति उचारैं॥ जयति उचारि समाज लखि जनक बुलाई जानकी। सतानन्द आनो तुरत खानि सकल कल्यानकी॥ ६७

मिथिलापुरके नारिनर सिय रघुबीर निहारि। विनती करहिं विरञ्चिसन अञ्चल अञ्जलि धारि॥ अञ्चल अञ्जलि धारि देहु बरदान विधाता। राम जानकी योग्य जोरि मिल-

वह यह नाता॥ नात जुरै न्टपश्रया टरै भूपति जाय लजाय घर। यह संयोग विचारि कहि मिथिलापुरके नारिनर॥ ६८॥

माल जलज युग हाथ अतुल छवि सिय पग धारी। जगत-जननि सुखखानि निरखि मोहे नरनारी॥ नारि मध्य वर जानकी रघुवर पद अनुराग हिय। देखत सुर नर मुनि मगन कीन्हे नयननिमेख सिय॥ त्यागि सकुच रामहि लखे नयन मूँदि छवि हृदय भरि। रङ्गभूमि सिय पग धरे जलज माल युग हाथ धरि॥ ६९॥

जनक बोलि बन्दी सकल कह्यो कहौ प्रण जाय। देव दनुज महिपति मनुज सबको देहु सुनाय॥ सबको देहु सुनाय भाट दश सहस सिधाये। चहूँ दिशि हाथ पसारि सुनहु भूपति चित लाये॥ चित लाये प्रण जनकको धनुष धर्‌यो यह रङ्गथल। कर उठाय भञ्जै न्टपति वरै जानकी वाहि पल॥ ७०॥

हरगिरिते गरु जानिये कमठपृष्ठते खोर। महिसँग रच्यो विरञ्चि जनु सकल वज्र तनतोर॥ सकल वज्रतन तोरि मोरि मुरि गये दशानन। बाणासुरसे सुभट भये भञ्जित कहु जानन॥ जान न कोउ याको मरम शिवहि छाँड़ि को तानिये। निजबल हृदय विचारिके हरगिरिते गरु जानिये॥ ७१॥

न्टपसमाज प्रण कहत हौं रेखा वचन खँचाय। रङ्क राज शिरताज सोइ लैहै धनुष उठाय॥ लैहै धनुष उठाय जगत-मँह कीरति होई। जयमाला उर डारि जानकी व्याहै सोई॥ सोइ धनु धरि बल समुझि निज मुखमैं कारिख नहिं लहौं। वीर धीर धनु सो गहै न्टपसमाजसैं प्रण कहौं॥ ७२॥

नहिं छीवै कर धनुष ये सबको कहौं बुझाय। जिन भूप-नं रण मण्डिके रिपुबल देखि भगाय॥ रिपुबल देखि भगाय

गाध द्विज सन्त न मानहिं। परतिय परधन हेत देत शठ हठ-वश प्राणहिं॥ प्राणहिं देत समर्पिकै ममतावश पातक बये। कारिख लागहि सुखनमें नहिं छीवै कर धनुष ये॥ ७३॥

ऐसे नृप धनुका धरें सुनहु सकल महिपाल। प्रजादण्ड परचण्ड अघ दान न कवनेहु काल॥ दान न कवनेहु काल देव गुरु पितृ न मानहिं। श्रीमदते मदअन्ध वेदको पन्थ न जानहिं॥ जानहिं मातु न पितु धरम कर्म वचन पातक करैं। कारिख कुलहि लगावहीं ऐसे नृप धनुका धरैं॥ ७४॥

ऐसे नृप धनु ना गहौ मानहु बचन प्रतीति। पुर घेरहि लावहिं अनल राखहिं नहीं सभीति॥ राखहिं नहीं सभीत भीत सन्धी हित तोरैं। पातक बाँधै सेतु पुण्यसरि सर वृति मोरैं॥ मान मर्दि द्विज धन हरै तिय बालक बध कुल दहौ। कहौं पुकारि पसारि कर ऐसे नृप धनु ना गहौ॥ ७५॥

समुझि भूप धनुषहि धरौ निजकुलबलदल देखि। मातु ओर पितु ओर है धर्महि तजे विशेखि॥ धर्महि तजे विशेषि शूरको लोक न जाको। अनु समर बलवन्त तेग लोचण नहिं बाँको॥ बाँको कीरति चन्द्रसी जगत उजेरो नहिं करौ। भाट कहत प्रण खाँचिकै समुझि भूप धनुषहि धरौ॥ ७६॥

धनुष आँगुरी जनि छुयो बल कुल आपु निहारि। सत्य सुकृत त्यागे हृदय कहत असत्य विचारि॥ कहत असत्य विचारि नारिबध ब्राह्मण कीन्हौ। आगतको सङ्कल्पि ऐंचि द्विज सुखते लीन्हौ॥ द्विजसुख दरशन करि भयो दानि-शिरोमणि यश लियो। बदन रदन मसि लागि है धनुष आँगुरी जनि छुयो॥ ७७॥

शेष समान नरेश सो धरै भूमिको भार। जाको मातु

हनुमानको तेज प्रताप अपार॥ तेज प्रताप अपार चन्द्र सम कीरति जारी। पावक सम द्युतिवन्त पवनतें बल अधिकारी॥ बल अधिकारी पवनसों बुद्धि प्रकाश गणेशसों। सो धनु धरैं महेशको शेष सुजान नरेश सों॥ ७८॥

यहि प्रकारके रूप धर शिवपिनाक परचण्ड॥ जाके सत्य प्रतापकी ध्वजा दीपनवखण्ड॥ ध्वजा दीप नव खण्ड भूप हरि चन्द्रसो होई। पृथु रघुवान दिलीप सगर अंशुमान सो कोई॥ कृष्ण यादि सुगाधिसे शिविदधीच रूप उच्चरै। वार वार प्रण उच्चरैं यहि प्रकारके धनु धरैं॥ ७९॥

कौनारायण धनु धरैं जाको प्रबल प्रताप। धरयो सेतु बन्दर गहो मथेउ सिन्धु करि दाप॥ मथे सिन्धु करि दाप प्रबलहिरण्याक्षहि मारो। मुरमधुकैटभ वधन सुयश जगमें विस्तारयो॥ विविध भाँतिवसुधा सकल तुलसी प्रतिपालन करैं। तुल्यो होय रूपरूप धरि सो नारायण धनु धरैं॥ ८०॥

विधि समान पर चण्ड सो आयोहोय समाज। ज्यहि जगकी रचना करि सरिसर गिरि गजराज॥ सरि सर गिरिगजराज समुद्र सातहु जिन बाँधे। ऊँच नीच जग सृष्टि प्रबल बलते ज्यहि साधे॥ साधि वेद चारौ मुखनि रचो सकल ब्रह्माण्डसो। यह कोदण्ड सोई धरै विधि समान परचण्डसो॥ ८१॥

कौपुनि शङ्कर धनु धरै ज्यहि विष कीनो पान। त्रिपुर दनुज दाहन जगत हतो एकहीबान॥ हतो एकही बान मदन तन रिसमें जारयो। चन्द्र गगन शिर धरै शूल शूरज ज्यहि मारयो॥ मारयो दुख सब जगतको जगत सबै पलमें हरैं। आयोजो रूप रूप धरि कौपुनि शङ्कर धनु धरैं॥ ८२॥

गणनायक सो होय जो सो धनु धरै प्रमान। जाको पूजै प्रथम सुर विघ्न हरणकीबान॥ विघ्न हरणकीबान ध्यान हरि

हर बिधि साध । ज्यहि सुमिरणते सिद्ध सिद्धि योगहि अवराधैं ॥ अवराधैं गिरिजा भुवन फल पावहि सुखजोहि जो । सोपिनाक यह कर धरै गणनाथकसो होयजो ॥ ८३ ॥

शशि सूरज दिगपाल सब सुर सुरपति महिपाल । यक्ष सर्प गन्धर्व नर मनुज दनुज यमकाल ॥ मनुज दनुज यम काल पितृ मुनि सिद्ध समाजे । गिरि समुद्र वसु मरुत जहां लगि सकल बिराजे ॥ सकल विराजैं सब सुनत ज्यहि बलहोय सो उठहु अब । धरि धनु प्रण पूरो करौ शशि सूरज दिग्पाल सब ॥ ८४ ॥

बैठकते उठि उठि सजे सुनत भाटकेबैन । अभिमानी मानीमहिप कियो हिये अतिचैन ॥ कियोहिये अतिचैन देवबल इष्ट सभारयो । कटिपट दृढ़ करि कच्छ भुजनि को जोर प्रचारयो ॥ जोर प्रचारि निहारि भट अरुण नयन आसन तजे । कहां धनुष तृण सम कहां बैठकते उठि उठि सजे ॥ ८५ ॥

धनु न नयो बर कटि नयो तमकि छुये धनु आनि । पांव न-वै शीशहु नवै भई प्रबल बलहानि ॥ भई प्रबल बल हानि मान मुख कोसब सूख्यो । तनमेंचल्यो प्रस्वेद अधर दल विद्रुम रूख्यो ॥ रूख्यो विद्रुम वदनभो देह दशाविह्वल भयो । लोचन मन दूनो नये धनु न नयो कर कटि नयो ॥ ८६ ॥

एकतजैं एकै धरैं करैं अनेक उपाय । बैठे ठाढ़े मध्य धरि धनुक हुँचाउनखाय ॥ धनुक हुँचाउनखाय बिरध बन्दीगण बोलैं । बैठहिं शीश नवाय नयनपलकै नहि खोलैं ॥ नयन करेरेभाट कहि मातु जनेकहुंतरु तरे । कोदौ कणी अहारके एकतजे एकैधरे ॥ ८७ ॥

धनु धनसबको हरि लयो मति गति नामसदाप । यश कीरति बल बीरता धीरज तेज प्रताप ॥ धीरज तेज प्रताप नियम

मत धम सुकमनि। अल्ल मल्लकोहारि रूप वृति लाज काज गनि॥ लाज काज परगाज धरि राजनि धनु कर सो छियो। रीते वीते सब भये धनु धन सबको हरि लियो॥ ८८॥

गाजि गाजि धनुकर धरयो लाजि लाजिगेभाजि। साजिसाजि बल दल सबै राजा राज समाजि॥ राजा राज समाज भये सुख गोवन लायक। सम्पति सबै गँवाय करयो शङ्कर धनुधायक॥ धायक आसन परगये जनुतनबल धनु छलि हरयो। लाजि लाजि बैठे सकल गाजि गाजि कर धनु धरयो॥ ८९॥

धनु सुमेरते गरु भयो उठै न कोटि उपाय। तिल न टरै भूपति लरैं धरैं अरैं लपटाँय॥ धरै अरै लपटाँय जायँगड़ि अधिक धरामैं। जयो शेषके शीश ईश जनु चढ़यो कलामैं॥ कलारूप कैलासको धरणि रूप धनुको वयो। उदय अस्त-गिरि भार धर धनु सुमेरते गरु भयो॥ ९०॥

क्रोध बचन बोले जनक नृप बल पौरुष देखि। प्रण प्रभाव देखन सबै आये भूप विशेखि॥ आये भूप विशेखि मनुज सुर असुर सभामैं। तिल भरि सकै न टारि शंभु धनु धरयो धरामैं॥ धरा नकटी धनुभते बल न करयो भूपति तनक। वीर धीर धरयो नहीं क्रोध बचन बोले जनक॥ ९१॥

प्रण हमार मिथ्या भयो जाहु सकल नृप धाम। विधि नर च्यो वै देहि वर पुरुष न कोऊ बाम॥ पुरुष न कोऊजान जो तौ प्रण यह धरतो कहा। कन्या रही कुमारी यह भई हास्य जगमैंमहा॥ हास्य भई बसुधा सकल शूरहीन सब जगठयो। जनक सभामैं कहै वचन प्रण हमार मिथ्या भयो॥ ९२॥

लषण लालको लालमुख सुने जनकके बैन। फरके अधर अलापको अरुण भये दुउनैन॥ अरुण भये दुउ नयन जोरि

कंपै छिति ठाढ़े। कछुक निमिकी ओर बचन बोले रिस बाढ़े॥ बाढ़े रिस कह सुनु जनक बचन कहे रघुवंश कुल। राम कृपालु समाजमहँ लखन लाल कह लाल मुख। ९३॥

कहहिंतुम बीरता धरौं यह पुरुषारथ कौन। प्रभु आयसु पावौं तनक धरौं चौदहोभौन॥ धरौं चौदहोभौन मही गट चट पट फोरौं। सन्दरसेल उपारि सकल वसुधा सब बोरौं॥ बसुधा बोरौं सकलमैं समुदरसातलमैं भरौं। शेषकोष धरि महिकरहिं कहा धनुष जीरण धरौं॥ ९४॥

महिस उठाउँ धनुष यह जो प्रभु आयसु होय। दिग्गज चारि यकत्र करि महीधरन धुनि सोय॥ महीधरनपुनि तीनिलोक चौदहधरि आनौं। हिमिगिरि अरु कैलास धनुष ऊपर धरि तानौं॥ तानौं सकल समाज नृप चढ़ि चढ़िआहुँभार कह। आय सहस योजनमही सहित उठावौं धनुष यह॥ ९५॥

जनक हिये सकुचे सकलभिडरे सकल महिपाल। दिग्गज धरयल डुलिगो भयते छिमि यमकाल॥ भयते छिमि यम काल जानकी हिय हर्षानी। गुरु रघुपति मन तोष कहो सुन्दर मृदु बानी॥ महिकंपतिमय लखणके सूरजके मन सुख भयो। सभा सशंक ससाय सुनि जनक शोक सकुच्यो नयो॥ ९६॥

कौशिक मुनि आयसुदयो सुनहु राम रघुबीर। धनुष उठावहु बाम कर हरहु जनककी पीर॥ हरहु जनककी पीर सभाको सोच निवारो। सुर सज्जन सुख लहहिं दुष्ट मुखको जिय कारो॥ कारो मुख महिपाल सब ज्यहि धनु निज करसों छियो। सोधनु करौ मृणाल इव कौशिक मुनि आयसु दियो॥ ९७॥

करि प्रणाम रघुवंश मणि उठे यथा मृगराज। माथ-हु मंगिल मौरि उर सुखमा छवि शिरताज॥ सुखमा छवि शिरताज संचते चले गोसाईं। पुर जन पुण्यसँभारि सँभारि देव दुन्दुभि बजाईं॥ दुन्दुभि बाजीं अति घनी बन्दीगन धन्य धन्य भनि। मध्य वेदिका पर गये करि प्रणाम रघुवंशमनि॥ ६८॥

पटकत धनु लक्ष्मण लख्यो जान्यो प्रभु मन बात। कह्यो धरणि धारी सबै सजगहूजिये गात॥ सजगहूजिये गात धनुष कौधकादरेरो। जो महि चलीतो सृष्टि बिकलता सबको हेरो॥ हेरोमैं रघुवंशमणि लेत धनुष मनमें सख्यो। सटकत सही संभारियो पटकत धनु लक्ष्मण लख्यो॥ ६९॥

वाम अंगूठा पांयदवि वाम हाथ गहलीन। दमक दामिनी ज्यों करै सबके नयन मलीन॥ सबके नयन मलीन खैंचि कीनो नभनाईं। शब्द रह्यो ब्रह्मांड खण्ड है धर्‌यो गोसाईं॥ धर्‌यो गोसाईं शंभु धनु शब्द सुने योगी जगे। खण्ड खण्ड धनु तन भयो वाम अंगूठारे लगे॥ १००॥

शिव शिव वृषभ पुकारईं धनुष शब्द सुनि घोर। दिग्गज दिग्पालन भयो हृदय कम्प अति जोर॥ हृदय कम्प अति जोर कम्प कैलास ईशथल। शिव शिर सुर सरि धार उछलि आकाश गयो जल॥ गयो सुजल आकाश-थल उमा गणेश विचारईं। कहा भयो कैसो भयो शिव शिव वृषभ पुकारईं॥ १०१॥

जय जय जय रघुवंश मणि सुर फूलन बर्षाय। वेद विप्र बन्दी विरद नारी मङ्गल गाय॥ नारी मङ्गल गाय सिया जयमाल उठाई। शोभित प्रभु उर मध्य बिम्ब कौशलि

जनुछाई॥ कीरति गावहिं सिद्ध मुनि बल प्रताप छवि रूप अनि। सतानन्द आनन्द कहै जय जय जय रघुवंश मनि॥ १०२॥

नृपगण भये मलीन सब सन्त भये आनन्द। जनक शोच संकट गयो सिया मातु सुख वृन्द॥ सिया मातु सुख वृन्द निछावरि मणिगणदेहीं। रामसियाछवि देखि प्रेम वशकौन न केहीं॥ कौन न केहीं दान सब समय शंभु धनु टूट जब। तुलसिदास संकट गये नृप मन भये मलीन सब॥ १०३॥

महा मोद मिथिला पुरी राम कियो धनुभङ्ग। खल मलीन सज्जन सुखद सुरसु सुमन शुभरङ्ग॥ सुरसु सुमन शुभरङ्ग कपट भूपति मन मारे। लच्छण उठे सक्रोध राम भारत बचि राखे॥ बचि राखे रघुवीर नृपतिय प्रकटीं जुहुतीदुरी। राम सिया जोरी निरखि महा मोद मिथिला-पुरी॥ १०४॥

कर कुठार परशु रामके आये सुनि धनु भङ्ग। गौर रूप अनुरूप शिवजटा भस्म सर्वंग॥ जटा भस्म सर्वंग देखि सकुचे सब राजा। लागे करन प्रणाम काल निज समुझि समाजा॥ समुझि समाज पिनाक लखि कहे वचन अरि कामके। क्यहि तोरयो बोल्यो तुरत कर कुठार परशु रामके॥ १०५॥

तोरयो धनु रघु बंश मणि जाको प्रबल प्रताप। हानि कहा भय रावरी कहिय प्रकट करि आप॥ कहिय प्रकट करि आप देव द्विजवरकी नाई। पूजिय मानीय तुम्हैं आपनो वृद्ध बड़ाई॥ वृद्धबड़ाई तवहिं जगगाय विप्र पद पूजि अणि। देहु आशिषप्रेमसों धनु तोरयो रघुबंश मणि॥ १०६॥

काल वश्य बोलत कहा गुरुको धनुष विहंड। विप्रन ऐ-सोबोल सुनु नृप कुल शिरको खंड॥ नृप कुल शिरको खंड परशु करतो तीक्षण धारा। धनु ज्यहितोरयो आजुतासु भुजकाटन वारा॥ काटनवारा परशु यह ज्यहि काटे भूपति सहा। त्यहि समेत रामहिं हतौं काल वश्य बोलत कहा॥ १०७॥

भूपति मिले नखेतमें तुम्हैं विप्र कुल देव। हते तुम्हारे हाति गयेते द्विज पद विन सेव॥ ते द्विज पद बिन सेव क्षत्र धर्म नते हीने। ते तुम काटे परशु क्रूर कपटी जड़ दीने॥ जड़ दीने नृप तुम हते पाप राशि नहिं चेतमें। ताते बाढ़े भवनमें भूपति मिले नखेतमें॥ १०८॥

क्षत्र विहीनो महिकरी परशु वार इकबीस। सो न विदित त्यहि बाल जड़ तुरत जाइहै खीस॥ तुरत जाइहै खीस वचन मुख बोलु सँभारे। गुरु गुनहीं भो मौन ताहि तू पीछे डारे॥ पाछे बचहुन कालकेबालक राखि करि वर टरी। परशु धार ज्यहि काटिहौं क्षत्र विहीनो महिकरी॥ १०९॥

द्विज कुल के नाते डरौं सुनहु विप्र सत भाव। नत क्षत्री कुलको सकल लेहुँ तुरत अबदाव॥ लेहुँ तुरत अबदाव परशु धनु भूमि गिराऊँ। धर्मबड़ो रखवार मारि द्विजपातक पाऊँ॥ पातक पाऊँ शीशपर दूजे रघुपति कर डरौं। यमघर तुमहिं बसावतो द्विजकुल केनाते डरौं॥ ११०॥

लै कुठार सन्मुख धरयो राम लषणकी ओर। कौशिक नर जो बालकहि मोहि नहीं अबखोर॥ मोहि नहीं अब खोरि करौं अब काल हवाले। परशु बन्यो खड्ग हाथ

विपुल भूपति घर घाले॥ घर घाले शिर मालिका शंकरको पूजन करयो। अब चाहत तव शिर हरयो लैकुठार सन्मुख धरयो॥ १११॥

राम कही कर जोरिकै भृगु कुल कमल दिनेश। बालक दीन बिचारि उर क्रोध न कीजिय लेश॥ क्रोध नकीजिय लेश बाल अपराध विहीनो। धनुकर समते टूट चूकसों महीं अधीनो॥ महीं अधीनो कर्म नश बांधिय दीजिय छोरिकै। दास बिचारि प्रभाव सोहि राम कही कर जोरिकै॥ ११२॥

शंभु दण्ड खण्डित करयो सो भुज खण्ड हुँ आज। जो कर परशु प्रचण्ड लखि कटे अवनिके राज। कटे अवनिके राज बचहु नहिं दीन उपायन। क्षत्रबंशतनपाय बचन सुख मृदुल सुभायन॥ मृदुल सुभायन क्योंबचौधनु तोरत नहिं तब डरयो। अनुज सहित भुजकाटिहौं शंभु दण्ड खण्डित करयो॥ ११३॥

क्षत्र बंश द्विज मानिये लषण कही हँसि बात। इमपै पापन होय द्विज जननी कीन्हौ घात॥ जननी कीन्हौ घात ताहिते मन अति बाढ़ो। बड़ बैरी रण हत्योबिरद पायो शिर गाढ़ो॥ गाढ़ो पाय पाप शिर तासों रिसनहिं ठानिये। तुम्हैं मारिको अघल है क्षत्र बंश द्विज मानिये॥ ११४॥

रे कुठार कुण्ठित भयो गयो स्वभाव सक्रोध। अरि प्रचण्ड दहि अवनि नृप कीन्हो हृदय प्रबोध॥ कीन्हो हृदय प्रबोध सकल अरि देखत ठाढ़े। उत्तर सुनत सरोष और हृदि ज्वालन बाढ़े॥ ज्वाल न बाढ़े जरत उर घोर धारको लै गयो। काटि काटि कण्ठनिक तब रे कुठार कुण्ठित भयो॥ ११५॥

सो रघुपति आयसु करौं लै द्विज देहुँ देखाय। रण-मण्डलकी कठिनता तुमको देउँ बताय॥ तुमको देउँ बताय परशु धन लख्यो तुम्हारो। भूमिशेष सैं पार आरि बारन उर फारो॥ बारन उर फारो समुझि विप्रघात पातक परै। सभा ससैन विचारिये जो रघुपति आयसु करै॥ ११६॥

लक्ष्य वचन कहि धनु लियो नयन सयन करि राम। बरजे कुस बालक निपट भृगुपति सब गुणधाम॥ भृगुपति सब गुण धाम ताहिसों समसरि कीजे। जाको पदरज सेव्य आपने शिर धरि लीजे॥ शिर धरि लीजे रिस कृपा अनुज सिखावन प्रभु दयो। सुखकन्द राम निहारि नत लक्ष्य वचन कहि धनु लियो॥ ११७॥

अस समर्थ भृगुवंशमणि सुररक्षक द्विजपाल। महि-मण्डल इक्कईस गनि करी निक्षत्र विशाल॥ करी निक्षत्र मही सकल दई विप्रके हाथ। रुधिरकुण्ड तर्पन कियो तेई भृगुकुलनाथ॥ तेई भृगुकुलनायके चरण शरण सेवहु सुमति। अभय होय तिहुँ लोकमहँ अस समर्थ भृगुवंश-पति॥ ११८॥

जाके पदरजके धरे मुद मङ्गल कल्याण। अभयकरन सङ्कटहरन गावतवेद पुराण॥ गावत वेद पुराण कल्पतरु सम सुखदाता। हरिहर पूजत जाहि पर्म सुखदानि विधाता॥ दानि विधाता जानिके निशि दिन सेवन जे करैं। अर्थ धर्म कामादिको पद रज सुख जाके धरै॥ ११९॥

काल व्यालता सो डरत जाके द्विज पद प्रेम। यहै क्रिया यह योग है यहै योग जप नेम॥ यहै योग जप नेम कपट तजि मन वच कायक। सोइ सुकृती सोइ शूर जाहि द्विज भक्ति अमायक॥ मायक छल तजि पूजि पद तन मन

धन सेवा करत। जीव जाल दुखमाल सद काल व्याल कालौं डरत॥ १२०॥

सो त्रिलोक पावन परम जिनके हिय पद प्रीति। विभ्रम ममताको नहीं दिशा विदिशि सब जीति॥ दिशा विदिशि सब जीति मोह रिपु कटक भगावै। अघदाहक गुण ग्राम राम अनुजहि समुझावै॥ राम बुझावै अनुजको रघुबंश याही धरम। पदरज नित हिय धिर धरैं सो त्रिलोक पावन परम॥ १२१॥

राम सिखावन दुहुँ सुन्यो लषण और भृगुबंश। मति गति सुरति सँभारि उर ब्रह्म सच्चिदानन्द॥ ब्रह्म सच्चिदा-नन्द भयो नृप सुत अवतारो। सारँग करसैं दियो विविध विनती अनुसारो॥ विविध भाँति पातक लगै कटुक वचन मनसैं गुन्यो। परशुधरन पुनि लषण हू राम सिखावन दुहुँ सुन्यो॥ १२२॥

नृप सभीत उठि उठि चले परशुराम गति देखि। आशिष भृगुपति देय करि आनँद लह्यो विशेखि॥ आनँद लह्यो विशेषि जनकपुरजन सब रानी। बंदी मागध सूत उच्चरहिं मङ्गल बानी॥ मङ्गल बानी पुर भई बाजि उठे दुन्दुभि भले। सन्त सुधा सुरगण मुदित नृप सभीत उठि उठि चले॥ १२३॥

समय पाय कौशिक कहेउ जनक महीप बुलाय। सजहु सकल मङ्गल सुभग दशरथ नृपति बुलाय॥ दशरथ नृपति बुलाय व्याह कुलरीति सँभारो। माड़हु रचहु विचित्र नगर गृह गली सँवारो॥ गली सँवारहु अगर मय सब कुलकै संशय कहेउ चार पठाइउ अवधपुर समय पाय कौशिक कहेउ॥ १२४॥

सतानन्द अवधहि चले लगनपत्रिका हाथ। और नौरयुत सखा पत्रिक सकल सुमङ्गल साथ॥ सकल सुमङ्गल साथ देखि रघुपति पुर पावन। भूपति लियो हँकारि दीन्ह पत्रिका सुहावन॥ दीन्ह पत्रिका नृप लखी राम व्याह-मङ्गल भले। गृह गृह बजे बधाव पुर सतानन्द अवधहि चले॥ १२५॥

रामजानकी व्याह सुनि साजी भूप बरात। रथ तुरङ्ग मातङ्ग घनगजघण्टा घहरात॥ गजघण्टा घहरात दुन्दुभी धुनि चहुंओरन। मङ्गल भरि भरि थार भामिनी गान भकोरन॥ गान झकोर प्रमोद पुर सुरतिय जय जय सुमन धुनि। दश-रथधों सुरपति सज्यो रामजानकीव्याह सुनि॥ १२६॥

कुल विचार व्यवहार करि गुरुआयसु नृप पाय। मिथिला पुरको मग लियो भूप निशान बजाय॥ भूप निशान बजाय सगुन सुन्दर शुभ पाये। बीच बास करि बिबिध जनकपुर भूपति आये॥ भूपति आये जनकपुर अति उछाह आनन्द भरि। दुहुँ समाज संगम सुभग कुल विचार व्योहार करि॥ १२७॥

उमा रमा ब्रह्मायणी पतिन सहित पुर आय। राम जानकी रूपछवि देखनको ललचाय॥ देखनको ललचाय निरखि दशरथके बारे। मनवचक्रमवशप्रेम भये सब देखन-हारे॥ देखनहारे भे मगन ऋधिसिधि मङ्गलदायनी। सिय बिवाहकलकर्म सब्ब उमा रमा ब्रह्मायनी॥ १२८॥

सुघल भूप डेरा दियो कौशिक लक्ष्मण राम। पाय खबरि पितु आगमन चले हर्षि गुणधाम॥ चले हर्षि गुण-धाम मुदित भेटे रघुराई। मुनिपदरज धरि भूप भरत भेटे दोउभाई॥ भेटे पुरजन गुरुद्विजन राम देखि पूरण हियो।

ऋधिसिधि सब मङ्गल लिये सुथलभूप डेरा दियो॥ १२९॥

सखि नृप सँग द्वै और सुत गौर सुभग सुठि श्याम। लषण अनुहरते एक हैं एक सत्य जनु राम॥ एक सत्य जनु राम कहैं जे नयन निहारे। वैसहि वदन मयंक नयन वैसहि रतनारे॥ वैसहि लक्ष्मण राम छवि तैसे वल छवि देह दुत। नाम भरत रिपुहन कहत सखि नृपसँग द्वै और सुत॥ १३०॥

सखि विदेह समुझैं हिये तीनि रूप मैं कौन। चारहु कुवँर बिवाहिये यहि पुर भूप परवीन॥ यहि पुर नृप परवीन दीन विधि चारि सगाई। जस कन्या तस कुवँर योग शिव दीन मिलाई॥ दीन मिलाय महेश विधि बड़ो योग यपतप किये। तो सब पुर सुकृती समुझि सखि विदेह समुझैं हिये॥ १३१॥

चारि कुवँर तिरहुति चलैं पाय सुभग ससुरारि। कहुँ दिन दश कहुँ मास भरि देखि तृप्त नरनारि॥ देखि तृप्त नरनारि जाहि पुनि दुलहिनि चारो। कछु दिन वे उत रहैं जनक बोलि हैं कुमारो॥ जनक कुमारी आय हैं अवध छाँड़ि आपने थलै। बनि वनि दिन दश वीसमैं चारि कुवँर तिर-हुति चलैं॥ १३२॥

ये बातैं बड़ि पुण्यते सखि पुरवैं त्रिपुरारि। तौ विरञ्चि हमहीं रच्यो सुकृत टूट दिन चारि॥ सुकृत टूट दिन चारि चारि भूप कुवँर बिवाहो। माड़व तरे निहारि लेहु जग जीवन लाहो॥ जीवनलाहोको अवधि यह सुख देखहिं धन्य ते। विधि राख भूप डर जो वसे ये बातैं बड़ि पुण्यते॥ १३३॥

सखि सुकृती ताही गनै रामलषण छवि देखि। ताते पुर सुकृती बड़ो आये कुवँर विशेखि॥ आये कुवँर विशेखि नारिनर भे सुख भारे। दर्शनफल तत्काल भूप दशरथहि निहारे॥ दशरथ राम निहारि कै दूलह दुलहिनी पुनि बनै।

यह विवाह देखहि सुनहि सखि सुकृती ताही गने ॥ १३४ ॥

व्याह धरो विधि लिखि दई वर्षि सुमन सुर गाय। राम विवाह उछाह बड़ देखन चले बजाय॥ देखन चले बजाय सतानँद जनक बुलाये। दशरथ सहित बरात जनकमन्दिर चलि आये॥ मन्दिर चलि आये सबै पाँउड़ परि जय जय भई। करि उत्साह समाज शुभ व्याहधरो विधि लिखि दई॥ १३५॥

को वितान सुखमा कहै जिहि थल सुखमा आहि। नटत किंकरी लच्छमी रुख जुगवत पल जाहि॥ रुख जुगवत पल जाहि जहाँ दुलहिनि वैदेही। विधि हरिहर यम इन्द्र होत चितवैं हित तेही॥ चितवैं हित तेही कृपा दूलह औरघुपति रहैं। समधी दशरथ जनक सम को वितान सुखमा कहैं॥ १२६॥

इन्द्र ब्रह्म दूनो मिले वन्दी वर्णत भाय। सब समाज सब साज सो हमैं प्रत्यच्छ दिखाय॥ हमैं प्रत्यच्छ दिखाय यहै उपमा जिय आवे। नारि सहित सुकुमारि राम व्याहन सुख गावै॥ रामव्याहसुख देखही अमरावति संयुत चले। निज निज पुर सुरगण सहित इन्द्र ब्रह्म दूनो मिले॥ १३७॥

राम सुभूषित जगमगे माड़व मध्य समाज। भाये सुक्ता सौरछवि नखत सहित निशिराज॥ नखत सहित निशिराज नारिनर देखत शोभा। रघुपतिमुख शशिशरद निरखि छवि तृप्त न को भा॥ रघुपति मुखछवि शरदशशि नयन-चकोरनि लखि लगे। मदन कोटि शत वारिये राम सुभूषित जगमगे॥ १२८॥

मुनि वशिष्ठ अरु सतानँद भरद्वाज जावालि। अत्रि अगस्ति सुगर्ग ऋषि कश्यप मुनि तपशालि॥ कश्यपमुनि तपशालि देव

ऋषि सनक समेते । लोमश यह चिरजीव व्यास पाराशर जेते ॥ पाराशर कौशिक सहित गौतम शुक उच्चरत पद । वेदमन्त्र करयो करें मुनि वशिष्ठ ऋषि सतानँद ॥ १३९ ॥

सूरजकुलगति सब कहैं पावक आहुति लेय । गणपति कर पूजा करें विधि विवाह कहि देय ॥ विधि विवाह कहि देय पवन पुनि शेष महेशा । सुरपति सुरगण सहित मगन ढिग लखत रमेशा ॥ लखत रमेश सुदेश छबि राम सबहि जानत रहें । विप्रवेष वेदन पढ़ें सूरज कुलगति सब कहैं ॥ १४०

जनक मगन रानी सबै मुनि बशिष्ठ कहि दीन । सतानंद आनी सिया भूषण सजत नवीन ॥ भूषण सजत नवीन राम ढिग अस्थित कीन्हो । मुनिवर अवसर समुझि शान्ति श्रुति मग कहि दीन्हो ॥ दीन्हो दुन्दुभि अतिघनी सिय मण्डप आई जबै । दशरथ सभा समेत सुख जनक मगन रानी सबै ॥ १४१ ॥

जनक पायँ पूजन लगे शाखोच्चार उचारि । रानी नृप मन मोद भरि लेको परशु चिवारि ॥ लेको परशु चिवारि नारि वरमङ्गल गाई । कन्यादान विचारि देव फूलन झरि लाई ॥ फूले तब नृप सुकृतके चरण प्रचालत सुख जगे । निरखि बदन दम्पति मगन जनक पायँ पूजन लगे ॥ १४२ ॥

जे पदपङ्कज नृप धरे जे शिवमान सहंस । जे पदपङ्कज मृदुल रस मुनि संकुल अलिवंस ॥ मुनि संकुल अलि वंश प्रकट कीन्हो जिन गङ्गा । वरणत वेद पुराण प्रणतहित विरद अभङ्गा ॥ विरद अभङ्ग प्रसङ्ग श्रुति मुनि लियके पातक हरे । अज सनकादिक ते भजैं जे पद पङ्कज नृप धरे ॥ १४३ ॥

जनकराव सबको सुकृत कहत देव मनमाहिं। निरखि गगन कौतुक परम जय जय कहहिं सिहाहिं॥ जय जय कहहिं सिहाहिं वचन कहि चार सँवारे। नरनारिन लखि रूप नेहबश देह बिसारे॥ देह बिसारे रूपको व्याहलाह लोयन लकत। कोमलेस मिथिलानगर जनकराय सबको सुकृत॥ १४४॥

होन लगीं वर भाँवरी दुलहिनि ललित ललाम। दूलह सुन्दर साँवरो छबि मुखपङ्कज राम॥ छबिमुख पङ्कज रामवाम सखि सब्द गावहिं। मुनिगण भाँवरिकृत्त करहिं गनि नियनि बतावहिं॥ अगम मोद भाँवरि परै रानी तन मन बावरी। सब कुलचार विचार करि होन लगीं वर भाँवरी॥ १४५॥

राम निछावरि को गनै मुक्ता मणि गण लाल। मण्डप धन पूरो भयो जनु जुवारि यव धान॥ जनु जुवारि जव धान जनकमन्दिरते आनैं। सुनि वशिष्ठके वचन नेग गहि ताहि दिवावैं॥ नेग साधि आहुति दई व्याह भयो सब कोउ भनै। देव भूप रानी जनक राम निछावरि को गनै॥ १४६॥

जेहि विधि रामबिवाह भो सो कहि सकहिं न शेष। सम्पति शोभा सुख सुभग मङ्गल मोद सुवेष॥ मङ्गल मोद सुवेष साजु शुभ सकल समाजैं। कहि कहि थके गणेश व्यास जिन श्रुति पथ साजैं॥ श्रुतिपथ साजैं ते चकित मोद विनोद उछाह भो॥ तुलसिदास सो किमि कहै जेहि विधि रामबिवाह भो १४७॥

जनक कौन जो मुनि कहेउ सब कन्यका बिवाह। भरत शत्रुसूदन लषण दूलह करे उछाह॥ दूलह करे उछाह रूपति दशरथ सुख पायो। रामव्याह विधि शोधि मुनिन देवनि करवायो॥ देवनि करवायो सुकृति दूलह दुलही

सुख लह्यो। जोरि चारि निहारि सुख जनक कौन जो मुनि कह्यो॥ १४८॥

मघा मेघ दशरथ भये याचक दादुर मोर। सर सरिता द्विजगण भये बाढ़ि चले चहुँ ओर॥ बाढ़ि चले चहुँ ओर शालि जनकादिक रानी। पुर परिजन भे कृषी सुखी सुख सुन्दर पानी॥ सुन्दर पानी बुंद मणि भूषण पट वर्षत नये। राम सिया पावस सुखद मघा मेघ दशरथ भये १४९॥

वर कन्या राउल चले मुनि आयसु अस दीन। भूप समाज समेत सब जनवासे पग दीन॥ जनवासे पग दीन बजे दुन्दुभि अति भारी। दुलहिन दूलह ल्याय भवन आसन देनारी॥ दूलह दुलहिनि सम निरखि रानी सुख सानी भले। रहसविवश लहकौर कृत वरकन्या राउल चले॥ १५०॥

रमा उमा गावन लगीं ले मातृनको नाम। धरि कपोल लह कौरकत करनि खवावत राम॥ करनि खवावत राम कुलाहल मङ्गल होई। नेक अनेक प्रकार सकुचकहँ प्रकटत होई॥ प्रकटत तिय वचननि कहैं रामसीय प्रेमनि पगीं। कहत केकयी कौशिला रमा उमा गावन लगीं॥ १५१॥

सिय सूधी तुम चतुर हौ रमा कह्यो मुसुकाय। मुनि-तियकी नाईं कहूँ कीजिय नहिं रघुराय॥ कीजिय नहिं रघुराय सीय सिख सुनहु हमारी। पद कबहूं जनि छुयो पर्वनिको सुगतिनि नारी॥॥ नारी चारि बिवाहिये एक धनुष दलि गथ लहो। रमा कहत रघनाथसों सिय-सूधो तुम चतुर हो॥ १५२॥

हासविलासविनोदमय नेग योग करवाय। राम उठाये भवनते शिविका रुचिर चढ़ाय॥ शिविका रुचिर चढ़ाय

कुलहिनिन सहित सुहाये। दुन्दुभि देवन पुहुप राम जनवासे आये॥ जनवासे देखत मगन भूप दीन लखि द्विरद हय। पोषे याचक विविध सुख हासविलासविनोदमय॥ १५३॥

षटरस चारि प्रकारके भोजन विविध बनाय। सतानन्द आगुहि जनक दशरथ चले लिवाय॥ दशरथ चले लिवाय पाँवड़े अर्घ सुहाये। मणिसिंहासन रुचिर कुरस भोजन परुसाये॥ भोजन परुसाये मुदित तियगण गानविहारके। मुनि दशरथ भोजन कियो षटरस चारिप्रकारके॥ १५४॥

पान मान प्रमुदित दये भये विदा जनवास। गहगह बाजी दुन्दुभी मङ्गल मोद विलास॥ मङ्गल मोद विलास बरातिन मन्दिर भूले। जनक प्रीति रज स्वच्छ रामछबि पावस फूले॥ फूले गज याचकन गृह पहिरि पाय मन्दिर गये। जान रायरघुपति सबहि पान मान प्रमुदित दये॥ १५५॥

तीनि मास दशरथ रहे नित नव आदर होय। विदा-साज साजी जनक सबको सुखलख जोय॥ सबको सुख-लख जोय सहस दश स्यंदन साजे। मुक्तामणि गणसुपट भाँड कञ्चनके राजे॥ मणिगण लागे अत जे ते ते रथपूरे लहे। जनकराज दायज सजे तीनि मास दशरथ रहे॥ १५६॥

दिग्गज सहसपचासलौ सजे जरकसी साज। मणि-मुक्ताकी झालरी झपे सोह गजराज॥ झपे सोह गजराज जरीजरकसी अमारी। तिमिर अरुण इकठौर मनो पावस अँधियारी॥ पावस अँधियारी सघन घराट शब्द सुखासलौ। जनक राय दायज सज्यो दिग्गज सहसपचासलौ॥ १५७॥

तुरी लाखदश वर सजे बरन बरनके जीन। रथतुरङ्गते अति भले चञ्चल सुभग नवीन॥ चञ्चल सुभग नवीन अलंकृत

भूषण राजे। वरन निदरि मनवेग रङ्ग रङ्गनि वनि साजे॥ वनिवनि साजे बाजिवर जिनहि देखि सुरहय लजे। जनक-राय दायज सज्यो तुरी लाखदश वर सजे॥ १५८॥

वृषभवृन्द दशलाखलौ सुन्दर सब गुणधाम। शृङ्ग अङ्ग मण्डित प्रगट सोहत ललित ललाम॥ सोहत ललित ललाम भये भोजन पकवानें। सौरभ मृगमद मलय अगर कुमकुमके थाने॥ अगर कुमकुमा रस भरे कुपे जरकसी आँखलौ। जनकराय दायज सज्यो वृषभवृन्द दशलाख-लौ॥ १५९॥

महिषी लाखसतानवे देश देशकी खानि। मनो श्याम-घनके सुवन मही चरैं सब आनि॥ मही चरैं सब आनि दूध धरनी धसि धारे। शृङ्ग कण्ठ मणिहार शिशुन प्यावत सुकुमारे॥ प्यावत सुकुमारै थननि दूध सुधार विधानवै। जनकराय दायज सज्यो महिषी लाखसतानवै॥ १६०॥

धेनु लाखयुगबानबे कामधेनुसी रूप। अलङ्कार मणि-गण बसन सोहत परम अनूप॥ सोहत परम अनूप दूध सूधी सुठि रूरी। संगशिशुनके वृन्द सकल शुभ लक्षण-पूरी॥ पूरी छबिको को कहै जेहि देख्यो सोइ जानबै। जनकराय दायज सज्यो धेनु लाखयुगबानबै॥ १६१॥

शिविका लाख बहत्तरी सियदासी असवार। मनहुँ काम-तिय रति रहीं करि षोड़श शृङ्गार॥ करि षोड़श शृङ्गार जानकीप्रिय अधिकारी। मन गति रति परवीन चतुरविद्या छबि भारी॥ विद्या छबि सतभाव उर सिय सेवा उनमत्त री। दासी दायज नृप सज्यो शिविका लाख बहत्तरी॥ १६२॥

सवालाख पिञ्जर सज्यो कञ्चनखँचित विचित्र। शुक सारिका मराल बहु कुहीबाज शुचिमित्र॥ कुहीबाज शुचि-

मिल लिया सचिकै प्रतिपाले। ते सेवक सब लिये जानकी सेवनवाले॥ सेवनवाले भाग बड़ जगतजननि जेहि जग छयो। तासुसङ्ग यह कौन बड़ उवालाख पिञ्जर सज्यो॥ १६३॥

कट अजा अरु छ्वानको लेखा गनो सिराय। जे प्रिय लियकै नृप तज्यो नगर बाहरे जाय॥ नगर बाहरे जाय मनहुँ अमरावति घेरी। दुन्दुभि दये सहस्र छत्र अरु चमर घनेरी॥ चमर घनेरी भवन पट आसन विविध विधानको। दायज दियो नये गने कट अजा पछ छ्वानको॥ १६४॥

रानिन सुता सँवारिकै कछ्या सीख सुनाय। पति-व्रतधर्महि दृढ़ धरेहु सेयहु सहज सुभाय॥ सेयहु सहज सुभाय होहु नित स्वामिहि प्यारी। सदा सुहागिनि होहु यहै आशीष हमारी॥ यहै आशीषा देहि ढप सुता अङ्क उर धारिकै। भेंटि भेंटि पांयन परें रानी सुता सँवारिकै॥ १६५॥

जनकनयन धारा बहै सुता लिये उर लाय। सिय कछ्या छोड़त नहीं जनक न त्यागी जाय॥ जनक न त्यागी जाय सचिव समुझावत राजे। धीरज धर्मपरान ज्ञान गुण ध्यान समाजे॥ ध्यानसमाज न लाज रह छूटत लगत रोवत गहै। मातु गरे पुनि पितु गरे जनक नयन धारा बहै॥ १६६॥

विदा हेत रघुवर गये जनकरायके धाम। रानिन लखि आसन दियो कीन्हे राम प्रणाम॥ कीन्हे राम प्रणाम कहत मृदु वचन सुहाये। विदा दिजीये मातु नृपति चह अवध सिधाये॥ अवध सिधाये सुनत नृप रानी सुख सूखत भये। वचन न मुखपङ्कज कढ़्यो विदा हेतु रघुवर गये॥ १६७

रानी रघुवर पाँय धरि कहत वचन भरि नयन। तुम्हैं कहत मुनि योगि जन घटघट तुम्हरो अयन॥ घटघट तुम्हरो अयन सकल गति जाननवारे। दीजिय प्रभु वर युगल घ्यास यह हृदय हमारे॥ हृदय हमारे तुम बसो कहौं दूसरो विनय करि। सुता किङ्करी राखिये रानी रघुवर पाँय धरि॥ १६८॥

करि प्रणाम रघुपति चले रामसहित सब भाय। सुता चढ़ाई पालकी सुन्दर सीख सिखाय॥ सुन्दर सीख सिखाय भूप पहुँचावन आये दुन्दुभि दीन बजाय मुनिन देवन गुण गाये॥ गुण गाये पाये सगुनि सगुन सुहावन अति भले। समधी भेंटि प्रणामकरि करि प्रणाम रघुपति चले॥ १६९॥

अवध पांचये दिन गये बसि बसि सकल सुवास। पुरप्रमोद आवत सुने रहसविवश रनिवास॥ रहस विवश्र निवास पहिरि श्रृङ्गारन रानी। आरति मङ्गल साजि गीत गावहिं मृदुबानी॥ बानी मङ्गल सजि सबै कलश चौक चामर नये। अवधनाथ सुखकी अवधि अवध पांचयें दिन गये॥ १७०॥

परिछन करि भीतर गई पुत्रबधू सुत साथ। मङ्गल मोद समाजयुत आये कोशलनाथ॥ आये कोशलनाथ पुरी हर्षित नरनारी। पुत्रबधू सुत देखि मगन तनमन महतारी॥ मह-तारी वारहिं सुभग भूषण पट मणिगणमई। सुभग सिंहा-सन चारि धरि परिछन करि भीतर गई॥ १७१॥

मुनिनायक जो जो कहेउ सो सो करि व्यवहार। दान दीन विप्रन मुदित भरि भरि कञ्चनथार॥ भरि भरि कञ्चन-थार भामिनी मङ्गल गावैं। रानी भूषण देहिं सकल आशिषा सुनावैं॥ आशिष देहिं सनेह भरि शम्भु उमा परसन रहेउ। राम भाय दशरथ सुखद रहैं सदा मुनि जो कहेउ॥ १७२॥

रामविवाह बखानई मोदसमुद्र उछाह। नारद शारद

शेष शुक गणपतिको अवगाह॥ गणपतिको अवगाह व्यास विधि कहि कहि हारे। मतिअनुरूप बखानि भजनको भाव विचारे॥ मतिअनुरूप बखानिकै गिरा सफल निजु मानई। तुलसिदासके कौन मति रामबिवाह बखानई॥ १७३॥

इति बालकाण्डः समाप्तः॥

अयोध्याकाण्ड॥

कुण्डलिया॥

अवध अनन्द प्रबन्ध सुख छिन छिन अति अधिकाय। जबते राम विवाह करि आये कोशलराय॥ आये कोशलराय भुवन सब आनँद पूरे। ऋधिसिधिसम्पतिनदी अवधसागर भरिपूरे॥ सागरलह समानतो गयो शोक अरु दोष दुख। अमरपुरी अहिपुर धरणि अवधि अनन्द प्रबन्ध सुख॥ १॥

दशरथभाग सराहई सुर मुनिवर नरनारि। धर्मधुरीण प्रतापनिधि जिन पाये सुतचारि॥ जिन पाये सुतचारि जासु यश बरणि न जाई। औरघुपतिमुख देखि हर्ष अति लोग लुगाई॥ लोग लुगाई सुख गनत ब्रह्मानंद सो सुख चाहई। पुरो भाग अनुराग सुर दशरथ भाग सराहई॥ २॥

नृपसों विनय सुनायकै केकयसुवन सप्रीति। भरतहेतु विनती करी कहि मृदुवचन विनीत॥ कहि मृदुवचन विनीत दिवस दश रहैं गुसाईं। सुनिहु कहे नृप पाहि भूप

पठये दोउ भाई ॥ मुनि रखते आयसु दियो भरत उठे शिर नायके । केकयसुत ले भरत सँग नृपसों वितथ सुनायके ॥ ३ ॥

बिदा रामके चरण धरि भरत शत्रुहन भाय । मातु गुरु भ्राता नृपहि चले सबहि शिर नाय ॥ चले सबहि शिर नाय सुभट सेना सँग लीन्हे । श्रीरघुपतिपदकमल हृदय मन मधुकर कीन्हे ॥ मनमधुकर पदकमलरति सुमिरतनाम सनेह भरि । धन्य भरत भूतल भये बिदा रामके चरण धरि ॥ ४ ॥

नारद आये अवधपुर रामचरित हित जाहि ॥ प्रेम नेम जाके अवधि रामरूप उरमाहि ॥ रामरूप उरमाहिं राम देखत उठि धाये । पूजत विविध प्रकार जोरि कर प्रभु शिर नाये ॥ प्रभु शिर नाये बूझियो मुनि प्रकटो विधि हृदय जुर । कहन बिरञ्चि सँदेश सब नारद आये अवधपुर ॥ ५ ॥

रामबचन सुनि मुनि गये पाय बचन बिश्वास । राम प्रकट माया करी सबके हृदय प्रकाश ॥ सबके हृदय प्रकाश गुरुहि नृप जाय सुनायो । रामतिलक करि देहु नाथ सबके मन भायो ॥ सबके मन भायो सुखद सुनि वशिष्ठ आनँद भये । तिलकसाज साजो मुदित रामभवन सुनि मुनि गये ॥ ६ ॥

नृप बातें प्रकटीं सबै सुनि रघुवर समुझाय । नेम क्रिया व्रत धर्म नृप तिलक भेद विधि गाय ॥ तिलक भेद विधि-गाय कहेउ भूपसिहिं बुलाई । मङ्गल वस्तु मँगाय तिलककी घरी सुहाई ॥ घरी सुहाई कालि है राम राज्य बैठहिं जबै । बाजे विपुल धधाश पुर नृपबातैं प्रकटीं सबै ॥ ७ ॥

राम हेतु मङ्गल रचो आनो तीरथ नीर । पान फूल फल मूल तृण हय गय मणिधन चीर ॥ हय गय मणि धन चीर पुरी सुन्दरि रचि राखी । बन्दनवार पताक कलश चौके

अभिलाखौ॥ अभिलाषौ कुमकुम अगर वीथौ केरनिसौं सचौ। मणिमय दीप प्रकाशिये रामहेतु मङ्गल रचौ॥ ८॥

देखि देव शोचत भये अवध रामको राज। दुष्ट कष्टको नाशि है निश्चय भयो अकाज॥ निश्चय भयो अकाज सुमिरि शारदा बुलाई। राम विपिन कहँ जायँ मातु सो करहु उपाई॥ राम विपिन कहँ जायँ जब कर उपाय सुधि बलमये। चरण गहैं पालन करौ देखि देव शोचत भये॥ ९॥

धिक धिक देवन कहि चली आगे हेतु विचारि। अवध गई रानी जहाँ देखौ सुमति सँभारि॥ देखौ सुमति सँभारि तहाँ परवेशन पायो। कण्ठ मन्थरा बैठि तासु चित हित भरमायो॥ हित भरमायो तेहि सबै प्रिया केकयीकी अली। पुर दुखदायिनि सो भई धिक् धिक् देवन कहि चली॥ १०॥

नगर देखि बातैं कहौ हित लोरनकी घात। मोहिं शोच छक उर भयो जो फर मानहु बात॥ जो फुर मानहु बात हितू हैतौ दुख जानै। काज नशात विचारि विना पूछेहु बखानै॥ बिनपूछे प्रभुके वचन इन बातैं पातक नहीं। उतर देत नहिं दोष है नगर देखि बातैं कही॥ ११॥

इन ठौरनि पूछे बिना कहै स्वामिसों दास। सर्प अस्त्र अरि विष अनल अनिल कपट दुर्वास॥ अनिल कपट दुर्वास अशन पथ अपथ जनावै। लाभहानि दुखदानि कहत पातक नहिं आवै॥ लाभहानि नहिं बोलई प्रभु आयसु दुख निशि दिना। स्वामि सुहागिलि देहि सिख इन ठौरन पूछे विना॥ १२॥

मोहिं भामिनी दुख भयो समुझि एक उत्पात। सब पुरको नीको लगै तुम्हैं भरतको घात॥ तुम्हैं भरतको घात

बाम न्टपरानि विचारी। कालहि राम न्टप होहिं भई पोक्षा पुर भारी॥ भारि बिपति विचारिकै हृदय मोर दुखयुत तयो भरत बिदेश नरेश पर मोहिं भामिनी दूख भयो॥ १३॥

बिपति बीज अङ्कुर भयो बयो कौशला रानि। पावस न्टप उर देखि शुभ आयसु सुन्दर पानि॥ आयसु सुन्दर पानि अवधथलयुत बल पाई। गुरु पुरजन भे वारि बुझै नित कीन्ह उपाई॥ कीन्ह उपाय सहाय सब भरत तेज तप सो गयो। चारि दिवस गत देखियो बिपति बीज अङ्कुर भयो॥ १४॥

सत्य मानि रानी कहै कहु सखि मोहिं उपाव। भरत गये असगुन भये सो सब यहै प्रभाव॥ सो सब यहै प्रभाव सुहृदसम मैं सब जानौं। सवति ईरषा छाँड़ि पुत्र पति आपन मानौं॥ आपन मानि न कछु कहिय न्टप मलीन उभरन चहै। हित जगत मेरी तुही सत्य मानि रानी कहै॥ १५॥

कहि सुखाय रानी बदन जनि मन करसि मलीन। द्वै वर तेरे न्टप चहैं लेहि माँगि परवीन॥ लेहि माँगि परवीन देखि दृढ़ वचन न डोलै। राम विपिन सुत राज्य सत्य करि न्टपसन बोलै॥ राम विपिन जब जाय हैं भरत भूप होई सदन। सवति हृदय यहि भाँति दहि कहि सुखाय रानी बदन॥ १६॥

मन प्रतीति रानी भई लई सीख उर आनि। जो कछु मन रघुपति चहैं सोई सत्य उर आनि॥ सोई सत्य उर आनि कोपके भवन सिधाई। दुर्गति करि तन दशा मनहुं यमपुरते आई॥ दशा मनहुं न्टप मरणकी धरणि कुलक्षणकी नई। देवि कुरीति सुनीति सिख मन प्रतीति रानी भई॥१७॥

का न करहि यह कर्मबल केहि जग यम नहिं लीन। पवन उगायो काहि नहिं को दुख दुखो न कीन॥ को दुख दुखौ न कीन सोइमद केहि नहिं बाध्यो। तृष्णाज्वर नहिं जरयो कामसर काहि न साध्यो॥ काहि न साध्यो क्रोधदल केहि न चल्यो लखीतरल। चितचिन्ताञ्चालिनि यथा का न करहि यह कर्मबल॥ १८॥

अवधपुरी अमरावती बाजै विपुल बधाव। सबके उर आनन्द अति रामतिलक सतिभाव॥ रामतिलक सतिभाव साँझ समया नृप पायो। सरल सुहृद नृप हृदय कैकयी गृह चलि आयो॥ आयो सुनि रिसके सदन वदन पीत भय छावती। अवधनाथ सुरपति सरिस अवधपुरी अमरावती॥ १९॥

सो दशरथ कम्पहि हिये काम प्रताप बलीन। जाकी बध सय लोकमहँ केहि अनर्थ नहिं कीन॥ केहि अनर्थ नहिं कीन चन्द्र सुरपति गति देखो। नृप दिलीप सुनि मत्स्य यया निहि चित अवरेखो॥ चित अवरेखहु कामबल तीनिलोक भेदित किये। ताको सर नृप उर गड़यो सो दशरथ कम्पत हिये॥ २०॥

देखि जाय रानी विकल भूमि शयन तन दीन। पट पुरान सूखे अधर नयन अरुणरँग पीन॥ नयन अरुणरँग पीन मनहुँ दुर्दशा अनैसी। विपति नारिके रूप कुमति जसि प्रकटति तैसी॥ प्रकटति वचन बदनमहँ कुमतिसाज धरि छल कुचल। भूप सभय पैठे भवन देखि जाय रानी विकल॥ २१॥

क्रोध कौन कारण कियौ गजगामिनि वरनारि। जोइ माँगसि सोइ देउँ तोहि कामादिक फलचारि॥ कामादिक फलचारि तोहिं परतीति सदाई। तेरे सुखके हेतु तिलकको

धरौ धोधाई॥ धरौ धोधाई तिलककी अवध लोग सुनि सुनि जियो। करि प्रबोध नृप पाणि गहि क्रोध कौन कारण कियो॥ २२॥

उठि बैठी बोलत भई करि कटाक्ष मुसुकाय। भूप न जानै सुहृद हदि नारि चरितके भाय॥ नारि चरितके भाय विधिहु नहिं जाननहारे। है वर थाती देहु चौर हम तजे तुम्हारे॥ तजे तुम्हारे दानिता कहौं शपथ खाँचो नई। फिरि न टरै कहि उचरीं उठि बैठी बोलत भई॥ २३॥

शपथ सत्य लखि काह चलि वचन अमङ्गलमूल। देहु एक बर प्रथम यह भरतराज्य अनुकूल॥ भरतराज्य अनुकूल दूसरो माँगहुँ साँई। चौदहवर्षविशेषि राम बन मुनि कौ नाँई॥ मुनिकौ नाँई जाहिं बन कालहि राम तौं अति भलो। मोर मरण अपनो अयश शपथ सत्य लखि कहि चलो॥ २४॥

सुनि भूपति उर अति दल्यो वज्र हृदय जनु लाग। मुख सुखान लोचन सजल प्राण विकल भय भाग॥ प्राण विकल भय भाग मूँदि राखे दोउ लोचन। शोक दाह उर ढकत कहत कछु बनत न शोचन॥ बनत न शोचन मुख वचन मनहु प्रेत कर्मनि छल्यो। धुनत शीश व्याकुल शिथिल सुनि भूपति उर अति दल्यो॥ २५॥

भये विकल सुनि नृप कहो वचन लगे जिमि बान। सत्य-संधता मन किये कह्यो देन बरदान॥ कह्यो देन बरदान वचन किन कह्यो सँभारे। कौशल्यासुत सुवन भरत नहिं सुवन तुम्हारे॥ भरत सुवन पठये कुशल रामतिलकआनँद महा। साधेउ छल तस फल लहो भये विकल सुनि नृप कहा॥ २६॥

नयन उघारे नृप कहत समुझि प्रिया वर माँगु। भरत भूपको तिलक पुर तामें लगै न दागु॥ तामें लगै न दागु राम बन पठवति काहे। कौन लाग अपराध राम सब साधु सराहे॥ साधु सराहे नारिनर अब आचर्य छाती दहत। ताते समुझि बिचारि कहु नयन उघारे नृप कहत॥ २७॥

ये न वचन टरि हैं नृपति भरहु उजरि पुर जाय। अवध अवधि विधना करहि अघ रविबंश नशाय॥ अघ रविबंश नशाय होय पुर काल हवाले। कलह कपटकी आगि अवनि भगि जाय पताले॥ भगि पताल अवनी घटै रवि शशि रेंगहिं उलटि गति। विधि हरिहर आपुहि कहैं ये न वचन टरि हैं नृपति॥ २८॥

अनल चन्द वरषे कबहुं शीतल सूरज होय। शेष तजै धरनी धरन समुद बिना जल जोय॥ समुद बिना जल जोय शम्भु शिर चन्द्र प्रजारै। तिमिर दहै रवि रूप वृद्धकर दण्डहि डारै॥ दण्डहि विधि जग सृष्टि सब नारायण मिटि जाहिं कहुं। ये न वचन नरपति टरैं अनल चन्द वर्षे कबहुँ॥ २९॥

राज्य न चाहैं भरत पुर लागो तोहिं पिशाच। मोरि मृत्यु बोलत वचन तव मुख चढ़ि शिर साँच॥ तव शिर चढ़ि करि साँच राम नृप होवहिं भारी। तुहि कलङ्क दुख मोर मिटहि कबहुँक नहिं नारी॥ नारी करि चित चाहिके वचन मोर जिय जानि फुर। राम भूप सेवक अनुज राज्य न चाहैं भरत पुर॥ ३०॥

नसो अवध नृप राम हैं यह जानत सब कोय। मोर मरण भो भामिनी यह सुख लख्यों न सोय॥ यह सुख लख्यों न सोय सत्य जिय जानेसु भामिनि। मीन जियै बिनु बारि रामबिनु जियों न भामिनी॥ जियों न भामिनि

छिन वृथा जानि मरण परिणाम है। तू अभागिनी तनु लियो बसो अवध नृप राम है॥ ३१॥

राम राम कहि नृप गिरो कुमति न मानी बात। अवध बधाव अनन्द बड़ नींद न लागी रात॥ नींद न लागी रात कालहि शुभ घरी सुहाई। देख्यो जाय सुमन्त्र भूप गति मति बिकलाई॥ मति बिकलाई देखिकै लखि कुचाल आतुर फिरो। आये राम लिवायकौ राम राम कहि नृप गिरो॥ ३२॥

पितु उठाय बोले वचन नृपति लीन उर लाय। नयन नीर धारा धसै वचन बोलि नहिं जाय॥ वचन बोलि नहिं जाय राम पूछी महतारी। कहति कठोर कुबैन कथा करणी कटु भारी॥ कटु भारी सो हेतु सुनि तन प्रसन्न कह मृदु वचन। लघु उपदेशत दुख सहा पितु उठाय बोले वचन॥ ३३॥

राउर चरण प्रतापते बन शुभ मङ्गल मोहि। मुनि तीरथ सेवन दरश मोर परमहित होहि॥ मोर परमहित होहि जात छिन बिलम न लागे। आतुर ऐहौं अवधि धरन पुनि चरन सभागे॥ धरन चरन पुनि आय हौं आयसु देहुय आपते। कुशल छेम घर आयहौं राउर चरण प्रतापते॥ ३४॥

उत्तर कहेउ न भूपमुख राम धरे नृपपाँय। कुमति कठोर कुवचन कटु मातु कहत मुसक्याय॥ मातु कहत मुसक्याय हृदय कोइल नहिं राजा। करि प्रबोध शिर नाय बिपिनको साजि समाजा॥ साजि समाज प्रसन्नमुख गहे मातुपद प्रेम सुख। राम चलत व्याकुल गिरो उत्तर कह्यो न भूपमुख॥ ३५॥

मातु गोद मोदति भरे कहति वचन आनन्द। कालहि तिलक नृप सुख सज्यो कितिक बार सुख वृन्द॥ कितिक बार सुख वृन्द लाभ लोचलून सब टौ। सिंहासन सिय

सहित निरखि रविशतद्युति छूटी॥ रविशतद्युति छूटी अवधि मधुर लाल भोजन धरे। न्हाय खाउ बहु बार भो मातु गोद सोकृति भरे॥ ३६॥

राज बिपिनको मोहिं दयो जहाँ मोर बड़ काज। राउर चरणप्रतापते कुशल आइ हौं साज॥ कुशल आइ हौं साज मातु आशिष मोहिं दीजे। जात दिवस नहिं बार हर्षि मन आयसु कीजे॥ आयसु कीजे हर्षिके मातुचरण प्रभु शिर नयो। कह मृदु दृढ़ कर जोरिके राज विपिनको मोहिं दयो॥ ३७॥

सहमि सुखानी सुनि वचन सिया धरे पग आय। राम बुझाई जानकी बिपिन विपति सब गाय॥ बिपिन विपति सब गाय सुनत लछ्मण उठि धाये। कहि कहि विविध प्रकार लषण सिय प्रभु समुझाये॥ समुझाये प्रथमहि सिया करि विवेक बन प्रिय सदन। उत्तर कछुक न सिय दयो सहमि सुखानी सुनि वचन॥ ३८॥

धरि धीरज कह जानकी मन समुझिय रघुराय। कण्टक-बन दावा अनल अनिल व्याल दुखदाय॥ अनिल व्याल दुख दाय व्याघ्र वृक अहि गज घेरे। सूकर भालु पिशाच विषम बन भय बहुतेरे॥ बहुतेरे उत्पात जे डरन दहे भय आनकी। प्रभु वियोग छाती दहै धरि धीरज कह जानकी॥ ३९॥

विपिन आपु सँग अति सुखी डासि पात तरु छाह। गिरिगण सरि सरवर मुदित क्षुधा तृषित नहिं दाह॥ क्षुधा तृषित नहिं दाह निरखि पदकमल तुम्हारे। श्रमपथ तन-क न लेश सकल विधि प्रभु रखवारे॥ प्रभु रखवार बिचारिये तजे जीव जानिय दुखी। त्यागिय मोहिं विवेक करि विपिन आपु सँग अति सुखी॥ ४०॥

प्रभु मुखपर नहिं प्रण करौं उत्तर दीन्हे पाप। तजौ तो

कहा बसाय पिय समुझि विचारिय आप॥ समुझि बिचा-रिय आप प्राण तन त्यागि निवारौं। प्रभु सँग जाइय धाय देह घर राखिय डारौं॥ राखिय डारौं देह घर बहुत कहत पातक डरौं। सत्य मन्त्र मन दृढ़ धरौं प्रभु मुखपर नहिं प्रण करौं॥ ४१॥

तुम लक्ष्मण मानौ कही राम सिखावन देत। मात पिता पुर शोच सब नाशहु बसौ निकेत॥ नाशहु विघ्न अनेक अवधपुर भरतहु नाहीं। भूप वृद्ध नरनारि दुखित मम दुख मनमाहीं॥ दुख मनको दूषण तजौ मानि मन्त्र राखो सही। दूषण देइहि मोहि नर तुम लक्ष्मण मानौ कही॥ ४२॥

प्रभु वनमें हौं घर रहौं आयसु तज्यो न जाय। प्राण वायु ममवश नहीं देह कहौ तहँ, जाय॥ देह कहौ तहँ जाय भार यह कापर डारौ। मैं सेवक शिशु कुमति चरणरज सेवनवारौ॥ सेवनबारौ रज चरण धर्म नीति मग किमि लहौं। अवध काज मेरो कहा प्रभु बनमें हौं घर रहौं॥ ४३॥

मातुचरण रघुवर नये बिदा माँगि कर जोरि। अश्रु धार धाई धरणि माता कहति बहोरि॥ माता कहति बहोरि कठिन उर फाटत नाहीं। ठाढ़ी देखत नयन राम सुत कानन जाहीं॥ कानन जाहि विशेषिकै सबके सुख सुकृति गये। भेटि लाय उर यह कह्यो मातुचरण रघुबर नये॥ ४४॥

गुरुपाँयन पुर सौंपिकै लीन लषण सिय साथ। चले भूप मंदिर जहां विदाहेतु रघुनाथ॥ विदाहेतु रघुनाथ राय उठि हृदय लगाये। नयनधार अन्हवाय राम बहुविधि समुझाये॥ समुझाये नृप राम बहु सिया प्रेम उर तोपिकै। लषण भेंट भूपति गिरयो राम चले गुरु सौंपिकै॥ ४५॥

करि प्रणाम रघुपति चले त्यागि अवध सुखमूल। सब-को सार सँभार करि मेटि मोहमय शूल॥ मेटि मोहमय शूल लोग सब व्याकुल भागे। रामविरहकी आगि नारिनर उठि सँग लागे॥ सँग उठि लागे नारिनर कालकर्म गुण दल दले। शिर धरि रानि बखानि कटु करि प्रणाम रघुपति चले॥ ४६॥

भूप बुलाय सुमन्तको सिखदै दयो पठाय। सुनत सचिव आतुर चल्यो स्यन्दन तुरत बनाय॥ स्यन्दन तुरत बनाय विनय करि राम चढ़ाये। तमसातीर निवास प्रथम दिन रघुपति आये॥ प्रथम लोग तजि प्रभु उठे सचिव साधि रथ तन्तको। गये राम जिय जानि सब सङ्ग बुलाय सुमन्तको॥ ४७॥

रामविरह दावानल भयो अवध वन घोर। पुरवासी खग मृग भये रहैं दुखी सब ठौर॥ रहैं दुखी सब ठौर-कैरवी भई किराती। ज्वाल बढ़ै चहुँ ओर जरति निशि दिन तन छाती॥ अवधि मेघकी आश उर रहि न सकत लप कठिन थल। सो उपाय व्रत जप सुहृद रामविरह दावा-अनल॥ ४८॥

राम गये सुरसरि निकट केवट परम हुलास। वचन सुमन्त बुलायकै बोले राम प्रकाश॥ बोले राम प्रकाश तात अब अवध सिधावै। पितुपद गहि मम ओर कुशल सब विधि समुझावै॥ समुझाये कहि कोटि विधि तदपि परयो सङ्कट विकट। चले कर्मवश सचिव पुर राम गये सुरसरि निकट॥ ४९॥

माँगी नाउ निहारिकै राम कहे मृदु बैन। सुनत बात केवट कहै सुनिये राजिवनैन॥ सुनिये राजिवनैन रावरो

पदरज खोंटो। मानुष उड़ि उड़ि जात काठको गति है छोटो॥ गति है छोटो मोरि प्रभु बात कहौं डर डारिकै। रज मानुष कर मूरि कछु मागहु नाउ निहारिकै॥ ५०॥

तरनि होय मुनिकी घरनि मरै सकल परिवार। कोटि करो बानन छरो कहो बचन शतबार॥ कहो बचन शतबार नाउ नहिं तुम्हैं चढ़ाऊं। अपने कुलको हानि होय जो तुम्हैं चढ़ाऊं॥ तुम्हैं चढ़ाऊं नाथ जब चरण प्रक्षालौं निज करनि। बिन धोये न चढ़ाय हौं तरनि होय मुनिकी घरनि॥ ५१॥

चरण प्रक्षाल बिलम्ब कह राम कह्यो मुसक्याय। पानी आन्यो दुहु करनि धरयो कठोता आय॥ धरयो कठोता आय पाँय पुनि धोवन लाग्यो। देवन बर्षे फूल कहत यहि समको भाग्यो॥ यहि सम बड़भागी कहा शिवविरञ्चि पदकमल चह। धन्य धन्य कहि सकल सुर चरण प्रक्षाल कुटम्ब सह॥ ५२॥

कौन पार परिवारको चरणसुधाजल प्याय। पीछे पार उतारियो निज कर कोशलराय॥ निज कर कोशल-राय उतरि सिय सहित बहोरी। केवट लीन बुलाय लेहु उतराई थोरी॥ उतराई थोरी लहो तोहिं भयो श्रम पारको। दीन देखि मोहिं दीन बहु पार कौन परिवारको॥ ५३॥

ते पद धोये आजु जैं शिव बिधि योग कमाहिं। जिन चरण नको शेष श्रुति बरणत निशिदिन जाहिं॥ बरणत निशिदिन जाहिं प्रकट कीन्हो जिन गङ्गा। अशरण शरण पुनीत पगनिको बिरद अभङ्गा॥ बिरद अभंग प्रमाणको धोये जनक समाजजैं। सकल सिद्ध सिद्धन दई ते पद धोये आजजैं॥ ५४॥

बिमल भक्ति वर दै चले राम लषण सिय सङ्ग। बन गिरि सरिसर ग्राम पुर देखत मृगजु बिहङ्ग॥ देखत मृगजु बिहङ्ग

ग्रामपुर निकसहिं जाई। देखि कहहिं नरनारि रामसिय सुन्दरताई॥ रामसिया सह अनुज युत देखि भाग तिनके भले। प्रेम नेम जप योगफल विमल भक्ति बर दे चले॥ ५५॥

एक कहत मुख चन्दसों भामिनि भावत मोहिं। कला कोश शशि शीतकर सीता कलित सजोहिं॥ सीता कलित सजोहि श्याम रेखा शशिमाहीं। लिय मुखपर लट श्याम सुभग वरणत कवि ताहीं॥ वरणत कवि मृगअङ्क कहि यह मृगनयन अनन्दसो। ताप हरत यह शशिमुखी एक कहत मुख चन्दसों॥ ५६॥

एक कहति मुख कमलसो और न पटतर ताहि। अरुण सुवासित अति मृदुल सो सियमुख अवगाहि॥ सो सिय-मुख अवगाहि शीत सुत वह यह सीता। कवि वरणत हैं वाहि याहि मुख सुयश पुनीता॥ सुयश पुनीता दुहुनको भ्रमर मिलि युग सुयलसो। और कहाँ उपमा लगै एक कहति मुख कम-लसो॥ ५७॥

सीतामुख सो मुख कहौ कमल चन्द्र सो नाहिं। कमल मन्द है रजनि द्युति चन्द मन्द दिनमाहिं॥ चन्द मन्द दिन-माहि राहु हिमिशत्रु सदाई। सीतामुख अरि नाहिं लोक-तिहुँ खोजहु जाई॥ लोकतिहूँ महँ बिदित है घटै बढ़ै निशिदिन लहौ। कमल चन्द पटतर कहाँ सीता मुख सो मुख कहौ॥ ५८॥

एक कहैं पुर धन्य है मातु पिता पुनि धन्य। जिन देखे ते धन्य हैं जहाँ जात धन धन्य॥ जहाँ जात धन धन्य विटप गिरि सरि सर जेते। खग मृग निरखत धन्य बसत थल बैठत तेते॥ बैठत तेते सङ्ग हँसि बोलत चितवत धन्य हैं। धन्य पथ्य वन धन्य हैं हम देखत अति धन्य हैं॥ ५९॥

राम लषण सीता सहित देखि प्रभाव प्रयाग। न्याय दान दीन्हे द्विजन प्रीति सहित अनुराग॥ प्रीति सहित अनुराग दर्शसुख सबहिन पाये। दुख सुख सबको देत आपु ऋषिआस्रम आये॥ आस्रम आये सुनत ऋषि भरद्वाज आनन्द सहित। आसन आदर मुनि करग्रो राम लषण सीता सहित॥ ६० ॥

राम तुम्हारे दर्शते यह फल प्रकट दिखात। नेम प्रेम जप योग तप तीरथ व्रत दुख गात॥ तीरथ व्रत दुख गात आजु सब सुफल हमारे। राउर आगम लहत नयन मुख सुखद निहारे॥ सुखद निहारे सुख भयो तीरथ राउर परशते। भयो सोइ मङ्गल परम राम तुम्हारे दरशते॥ ६१ ॥

भोर,प्रयाग नहायके राम लषण सिय साथ। चले मनो-हर मनहरन वन्दि चरण मुनिनाथ॥ वन्दि चरण मुनिनाथ सङ्ग रति ऋतुपति मानो। ब्रह्म जीवके मध्य लसत माया छबि जानो॥ माया छबि लय देखिधौं उमाशंभु गण नायकै। चले किधौं सुरपति शची भोर जयन्त लिवा-यकै॥ ६२ ॥

पन्थ चरित सिय रामको सबसुख मङ्गलदाय। राम लषण सियदर्शते खग मृग सुखी सुभाय॥ खग मृग सुखी सुभाय परमपदके अधिकारी। को न लहै सुख सकल सुखद वर वदन निहारी॥ वदन निहारि सप्रेममय भयो पर्म सुख धामको। गिरि तरु खग मृग नारिनर देखि चरित सिय रामको॥ ६२ ॥

बालमीकिआस्रम गये सिया लषण रघुराय। आये मुनिवर मिलनको भेटे हृदय लगाय॥ भेटे हृदय लगाय पूजि परिपूरण कीन्हे। आसन आदर देय फूल फल अङ्कुर दीन्हे॥

अङ्कुर दीन्हे अमिय सम अस्तुति आनँद मन भये। सकल सिद्ध साधन सुफल वाल्मीकिआश्रम गये॥ ६४॥

जाके हित मन गोच सित साधत साधन भाग। मोह-मदादिक गण तजै अहनिशि जागत याम॥ अहनिशि जागत जाम जापतप योग बिरागे। मानस ब्रह्मगि रूप रहत निशिदिन अनुरागे॥ निशिदिन अनुरागे रहैं ज्ञान ध्यान मन्दिर लहित। सो प्रत्यच्छ मूरति लखौ जाके हित मन गोल लित॥ ६५॥

राम कह्यो कर जोरिकै सुनिनायक सुनि बैन। आश्रम पावन दीजिये जहाँ करौं शुचि अयन॥ जहाँ करौं शुचि अयन विघ्न कछु तहाँ विनाऊँ। जानत कारण सकल कहा कहि प्रकट जनाऊँ॥ प्रकट जनाऊँ आश्रम न देहु सुनौश निहोरिकै। चलिय कृपा करि देहु सुनि राम कहेउ कर-जोरिकै॥ ६६॥

सुन्दर गिरिगण सरित वन दीख जाय मुनि सङ्ग। कहत महातम पर्व थल देखि होय दुख भङ्ग॥ देखि होय दुख भङ्ग सुखी खगमृग वनचारी। तरुवर फलित विभाग सुधासम सुन्दर वारी॥ सुन्दर जल थल निरखि यह चित्रकूट मङ्गल भरित। पावन करिय विहारथल सुन्दर वन गिरिगण सरित॥ ६७॥

राम लषण आश्रम कर्यो चित्रकूट सिय सङ्ग। मनहु विपिन वसि तप करत रति ऋतुराज अनङ्ग॥ रति ऋतुराज अनङ्ग राम लखि सुख वनचारी। भरि भरि दोना सफल भेंट धरि बदन निहारी॥ बदन निहारि निहारि सब मगन सदन मङ्गल भर्यो। विपिन भयो कामद सुखद रामलषण आश्रम कर्यो॥ ६८॥

अब सुमन्त्र अवधहि चले राम बिदा जब कीन। हृय न

चलहि रघुबरबिरह सचिव भयो दुख दीन॥ सचिव भयो दुख दीन शिथिल रथ हाँकि न आयो। बिकल बिषाद निहारि अश्व केवट पहुँचायो॥ केवट गृह आयो बहुरि साँझ पाय अवसर भले। हानि गलानि बिहाल उर अब सुमन्त अवधहि चले॥ ६९॥

कहु सुमन्त कहँ रामसिय उठे बिकल नरनाह। सचिव हृदय भेटेउ नृपति नयनन नीरप्रबाह। नयनन नीरप्रवाह सचिवसन बोलि न आयो। रामसिया सन्देश सकल सुख कहन न पायो॥ कहन न आयो सुखवचन ब्रह्मरन्ध्रपथ कढ़ो जिय। लखण रामसिय रामसिय कहु सुमन्त कहँ राम-सिय॥ ७०॥

भूपभवन रोदन परो रानी पुर नरनारि। अवधनाथ अथयो मनहुँ रविनिशि अवध निहारि॥ निशि सम अवध निहारि गारि सब कुमतिहि देई। बिपति वियोग कुयोग कलह दृढ़ दीन्हेसि नेई॥ दीन्हेसि सबकहँ दुसह दुख जेहिके करतब नृप मरो। हाय हाय लायो नगर भूप-भवन रोदन परो॥ ७१॥

राखि भूप तन करि यतन कह वशिष्ठ समुझाय। दूत पठाये भरतपहँ आतुर चार बुलाय॥ आतुर चार बुलाय भूप गति प्रकटेहु नाही। गुरू बुलाये भरत बेगि लै गमनहु ताही॥ गवन कीन शिर नाय तब हयगति मारग सुनि वचन। मुनि बुझाय रानी सकल राखि भूपतन करि यतन॥ ७२॥

गुरुसँदेश आये भरत अशकुन नगर नगीच। श्वान शृगाल उलूक खर बोलत अशुभ कुनीच॥ अशुभ कुनीच भरत मति गति थिति नाहीं। भरत देखि नरनारि बाम दाहिन चलि जाहीं॥ बाम आधपुर देखिके दुखज्वरसों

छाती जरति। धरत पावँ डगमग परत गुरुसँदेश आये भरत॥ ७३॥

भूषण भाजन साजिके सुन आगमन विचारि। लै आई केकयसुता सुत आरती उतारि॥ सुत आरती उतारि भाय दोउ भ्रमते भूखे। पियो न जल थल बैठि शूलके अङ्कुर धूखे॥ अङ्कुर शूल विचारिके कुशल पूंछि निजराजिके। दीन्हो सुतदाहक वचन भूषण भाजन साजिके॥ ७४॥

कुशल राज्य सब काजसैं राख्यों पुत्र सुधारि। भई मन्थरा परमहित दुख दूषण सब जारि॥ दुख दूषण सब जारि राज सब तुम्हते जाग्यो। कण्टक भे सब दूरि अगम वर न्टपसैं माँग्यो॥ अगम सुधारो बात सैं न्टप सुरपुर सुखसाजसैं। कछुक विगारयो विधि यहै कुशल राज्य सब काजसैं॥ ७५॥

रामलषण सिय बन गये मरे भूप तेहि शोच। तुमकहँ राज्यविलास अब कीजे छाँड़ि सकोच॥ कीजे छाँड़ि सकोच होत सब विधिको कीनो। मरन जियन जग रीति लेहु पुर राज्य नवीनो॥ राज्य सुनत व्याकुल गिरयो रोदन करि मुर्च्छित भए। तात तात हा तात कहि रामलषण सिय बन गये॥ ७६॥

परै न कीरा मुहँ जरयो वर माँगत जड़ तोहि। कुमति कठोर न न्टप लखो मिथ्या जन्मे मोहि॥ मिथ्या जन्मे मोहि वाँझ तू भई न काहे। ऐसो कुमति कठोर कर्म करि सो उर दाहे॥ दाहे उर खल बचन मुख राम विपिन-कह मन धरयो। को तू काके रूप धर परै न कीरा मुख जरयो॥ ७७॥

पौलम मारत नहि डरी बन पठये सियराम। प्रेत पिशाचिनि रूप तू भई कहांको बाम॥ भई कहांको बाम

राम तोहिं अनहित लागे। जोहसि सो उठि बैठु ओट तजि आँखिन आगे ॥ आँखिन आगेते टरै धिक मैं जन्म्यों जोहि घरी। रामसुवन पठये बनहिं पीतम मारत नहिं डरी ॥ ७८ ॥

आई दुखदायिनि तिया नाम मन्थरा जाहि। भूषण-भार शृंगारि तन रिपुहन लखि चष चाहि ॥ रिपुहन लखि चष चाहि दौरि पग कूबर मार्यो। परी धरणि धरि केश घसीटत तनक न हार्यो ॥ तनक न हार्यो बीर तब भरत जाय रच्छण किया। उठे त्यागि कुश दाहिनी आई दुख दायिनि तिया ॥ ७६ ॥

उठत कौशला गिरि परीं भरत देखि उठि दौरि। लीन्हे हृदय उठायके आँगन गिरीं बहोरि ॥ आँगन गिरीं बहोरि रोय दीन्हों दुहुं भाई। मातु लगाई कण्ठ अश्रु धारा नह-वाई ॥ नह वाये चषनीरते वीर भरत धीरज धरी। विकल भरत समुझावती उठत कौशला गिरिपरी ॥ ८० ॥

अञ्चल नयन लगायके आँसू पोंछति मात। तोहिं बिना सुत यह दशा उठन न पैयत गात ॥ उठन न पैयत गात रामसिय बनहिं सिधाये। पुर परिजन भे बिकल लषण सिय बहु समुझाये ॥ बहु समुझाये नहिं रहे राम चले सँग लायके। सुनत भरत जलसों भरे अञ्चल पोंछति धायके ॥ ८१ ॥

मातु जगत जन्म्यों वृथा भई न केकयि बाँझ। राम सिया अप्रिय भयो अयशमूल जगमाँझ ॥ अयशमूल जगमाँझ जासु हित यह मति तोरी। जन्मत हत्यो न मोहिं देति विषमाहुर घोरी ॥ माहुर दे मार्यो जगत कुल कुठारि उपज्यो यथा। नृपगति यह रघुपति विपिन मातु जगत जन्म्यो वृथा ॥ ८२ ॥

सुर गुरु द्विज पातक परैं जो जानत यह बात। बाल दारावध कृत अयश गाय गोठ पुर घात॥ गाय गोठ पुर घात मीत नृप माहुर दीन्हे। परधन परतियहानि परै अघ गोवध कीन्हे॥ गोवध निंदावेदको पर अपकारी अघ करै। जो जननी जानहुँ तनक सुर गुरु द्विज पातक परै॥ ८३॥

परघर अग्नि लगावहीं कुपथ पन्थ पग देयँ। वश करि तिय परधन हरैं रण भगि अपयश लेयँ॥ रण भगि अपयश लेयँ मातु पितु विप्र न मानैं। हरिहर पदते विमुख भूत प्रेतन उर आनैं॥ उर आनैं तीरथ कृत निज कुटुम्ब तृण लावहीं। जो जानों तौ अघ परैं परघर आगि लगावहीं॥ ८४॥

लोभ मोह फाँसे रहैं साधु सङ्ग नहिं लेयँ। मीत विप्र कुल कष्ट लखि अशन नीर नहिं देयँ॥ अशन नीर नहिं देयँ कूप सर वाग विध्वंसैं। तन पोषक बिन तोष यहत विष धन पर अंसैं॥ पर अंशैं जे नित धरैं कुवचन बोलि छाती दहैं। तिनकी गति विधि देहु जग लोभ मोह फाँसे रहैं॥ ८५॥

ते नर जग होतै मरैं करैं जन्म भरि पाप। रणमण्डल अपयश लहैं देहिं विप्र गुरु ताप॥ देहिं विप्र गुरु ताप वसत वर लाय उजारैं। सन्तसभा नहिं बैठि मृषा मुख वचन उचारैं॥ मृषा साखि जग उच्चरैं नित्य रारि उठि गृह करैं। रामसिया जेहि प्रिय नहीं ते नर जग होतै मरैं॥ ८६॥

तुम सुत शपथ न खाँचियो राम प्राण प्रिय तोहि। तुम रामहि अति प्रिय सदा विधि गति बाँकी होहि॥ विधि गति बाँकी होहि देहु दूषण जनि काहू। कर्म प्रधान किसान ब-

वे लुनियत सोइ लाहू॥ बयो लुनियत जगतमें भूप सरे छम बाँचिये। राम चले प्राण न चले तुम सुत अपथ न खाँचिये॥ ८७॥

बड़े ओर मुनि आयगे बैठेहि रैनि बिहानि। भरत बुझाय वशिष्ठ मुनि भूपक्रिया विधि आनि॥ भूपक्रिया विधि आनि दाह सरयूतट दीन्हो। रानिन केर प्रबोध भरत पाँयन परि कीन्हो॥ पाँयन परि करि कर्म सब तिल अञ्जलि छत रायके। भरत सिखाये मृत करम बड़े ओर मुनि आयके॥ ८८॥

हय गय मणि भूषण दये सिंहासन महिसाज। धेनु बसन आयुध चवँरछत्र पात्र शिरताज॥ छत्र पात्र शिरताज स्वमति गति मुनि जस भाषी। श्रत श्रत कौन विधान भरत करणो अभिलाषी॥ करि करतूति प्रमाण जस सब प्रकार विधिवत भये। शुद्ध सिद्ध करि काज सब हय गय मणि भूषण दये॥ ८९॥

शुद्ध भये मुनिवर गये जहां राजदरबार। नगर महाजन बिप्रजन सचिव सुभट सरदार॥ सचिव सुभट सरदार बोलि पठई सब रानी। भरत शत्रुहन साथ बोलि लीन्हे मुनि ज्ञानी॥ मुनि ज्ञानी बैठारि ढिग मधुर बचन बोलत भये। राजसभा दरबार सब शुद्ध भये मुनि वर गये॥ ९०॥

नृपति प्रेम पूरण कियो तेहिको शोचिय नाहि। जाको यश मधि अर्कको को नहि देखि सिहाहि॥ को नहिं देखि सिहाहि भोग सुरपति सम कीन्हो। राम बियोग कृशानु प्राण तेहि तृण धरि दीन्हे॥ राम लषण तुम शत्रुहन चारि सुवन लखि भगजियो। बिछुरि गयो सुरलोक वर नृपति प्रेम पूरण कियो॥ ९१॥

राम स्वभाव सनेहको कहिय कौन विधि गाय। पितु आयसु तुरतहि उठे लव पुरजन समुझाय॥ सब पुरजन समुझाय सिया लपणहि समुझायो। प्राण तजौं यह जानि सत्य करि शोचन आयो॥ शोचन आयो भूपको भूपति वचन सनेहको। धर्मशील गुणको कहै रामस्वभाव सनेहको॥ ६२॥

कठिन कैकयी का कहौं कहतहु कही न जाय। कुमति कुआगि बरायके दीन्हो अवध लगाय॥ दीन्हो अवध लगाय राम सिय वनहिं सिधाये। पुर परिजन मन शोच भूप हठि प्राण पठाये॥ प्राण गवाँये भूपवर भावी गतिको नहिं कहौं। विधि विपत्ता अति कठिन है कठिन कैकयी का कहौं॥ ६३॥

भूप वचन प्रिय प्राण नहिं भरत सुनौ सतिभाव। सो फुरको जिय शिर धरिय धर्म स्मृति श्रुति गाव॥ धर्म स्मृति श्रुति गाव तजे रघुवर जेहि लागी। मातु सचिव पुर लोग जरत ज्वर नाशहु आगी॥ नाशहु आगी अवधकी अवधि लगि न्टप राज्य लहि। दोष न कछु मानस करो भूपवचन प्रिय प्राण नहिं॥ ६४॥

कहत कौशला पाँय परि पूत सुनहु गुरु बात। भूप मरे रघुपति गये तुम यहि विधि कदरात॥ तुम यहि विधि कदरात अवश उत्पात विचारो। कालकर्म गति वाम कुदिन सुख कीजिय कारो॥ कीजिय गुरु आयसु मुदित पुर परिजन शिर भार धरि। पालि शोच सबको हरो कहत कौशला पाँय परि॥ ६५॥

भरत नयन धारा चली सुनि गुरुजननी वैन। हाथ जोरि बोले मधुर जल उमड़े दो नैन॥ जल उमड़े दो नैन

सीख भलि दीन्ह गोसांई। मातु कहेउ उपदेश मोहिपर दया सदाई॥ दया सदाईते कहत सचिव मातु गुरु हित भले। उत्तर देत पातक लहौं भरत नयन धारा चले॥ ९६॥

पाँयन पनहीं नहिं धरी राम विपिन किय गौन। भूप मरे प्रण पूर करि ताको शोचब कौन॥ ताको शोचब कौन घाव यह तीक्षण लाग्यो। यहै पीर नित दहत रयन भरि शोचन जाग्यो॥ शोचन जाग्यों निशि सबै जाति सबै छाती जरी। राम लषण कटिपट तजे पाँयन पनहीं नहिं धरी॥ ९७॥

प्रातकाल करि हौं यहै सुनहु सत्य सब बात। धर्म जाय जग अयश लहि नरकहु दुख सहिगात॥ नर कहुदुख सहि गात जन्म भरि सङ्कट होई। सब दुख दाँवा दहौं अनल वरु डारहु कोई॥ डारहु कोय जुवाल ज्वर सकल दोष दुख भरि रहै। जाहुँ अनुजयुत बिपिन कहँ प्रातकाल करि हौं यहै॥ ९८॥

शरण सामुहे देखिके रघुपति करि हैं छोह। शील स्वभाव सुस्वामिको समुहे जनपर मोह॥ समुहे जनपर मोह रामसिय बाम न काहू। मैं शिशु सेवक नीच कुमति उर प्रकटेउँ ताहू॥ प्रकटेउ विधि अघ अयश लै नीच दास शिशु लेखिकै। रामसिया करि हैं कृपा शरण सामुहे देखिकै॥ ९९॥

भरत वचन लखि रबि जगे रामबिरह निशि पाय। भूप-मरण कैकय कुमति तिमिर रहेउ पुर छाय। तिमिर रहेउ पुर छाय मुर्छि सोवत नरनारी। लषण सियाको विरह व्याघ्र वृक गर्जत भारी॥ गर्जत भारी भय बिकल तारागण मुनि द्विज लगे। दुखद सेज सोवत बिकल भरत वचन लखि रबि जगे॥ १००॥

सबके मन सब सुख भयो भरत भलो मत कीन। दुख समुद्र बूड़त सकल जेहि अवलम्बन दीन॥ जेहि अवलम्बन दीन सभा सब उठि भे ठाढ़े। रामचन्द्र सिय दर्श मन्त्र नद वारिधि बाढ़े॥ वारिधि बाढ़े लोग सब भरत मन्त्र सबही लयो। साजि साजि वाहन चले सबके मन सब सुख भयो॥ १०१॥

भरत साज साजत भये मातु सकल पुरलोग। चले चित्रकूटहि भरत कृश तन रामवियोग॥ कृश तन रामवियोग चले सजि साज समाजे। पाँयन पनहीं त्यागि शीश नहि भूषण राजे॥ भूषण साजे त्यागिके भाय मातु सँग सब लये। रामप्रेम पूरण भरे भरत साज साजत भये॥ १०२॥

तमसातीर निवास करि प्रात समाज समेत। सुरसरि देखो जाय तब केवट कहत सचेत॥ केवट कहत सचेत भरत सेना सँग लीन्हे। समुझि निषाद विचारि कपट अन्तरमहँ दीन्हे॥ अन्तर कपट विचारिके सजग होउ सब घाट धरि। राम जानि वन भरत सजि तमसातीर निवास करि॥ १०३॥

रामकाज जूझहु सुभट भरत रामके भाय। मैं सेवक रघुवीरको लोहे देहुँ अघाय॥ लोहे देहुँ अघाय सुभट विन कटक निहारौ। हय गय रथ जल बोरि पाउँ पीछे जनि धारौ॥ पाउँ न पीछे कोउ धरहु राम काज अरु गङ्गतट। मोर निहोर विचारिके स्वामि काज जूझहु सुभट॥ १०४॥

पहिरत अगरी धनु धरत भई छींक गति वाम। सगुन सगुनिया कहि चल्यो सगुन सुमङ्गलधाम॥ सगुन सुमङ्गल-धाम भरत नहिं कपट कुचाली। राम मनावन जाहिं सङ्ग लै मातु सुचाली॥ सङ्ग मातु गुरु सचिव सब लोग राम

शोचनि जरत । सहसा कर्म न कीजिये पहिरत अगरी धनु धरत ॥ १०५ ॥

समुझि भेट नृप ले चले खग मृग धन पट मीन । मिलन साज सब सङ्ग लिय पुरजन परम प्रवीन ॥ पुरजन परम प्रवीन मिल्यो मुनिवरकहँ आगे । रामसखा सुनि भरत चले मिलनै रथ त्यागे ॥ रथ त्यागे केवट कह्यो नाम जाति पुर जन भले । भरत चल्यो उमँगत नयन समुझि भेटि नृप लै चले ॥ १०६ ॥

भरत कुशल पूँछी सबै केवट विनती कीन्ह । अब पद रज लखि कुशल सब प्रभु दर्शन जब दीन्ह ॥ प्रभुदर्शनके लहत सकल दुख दूरि पराने । चलिये अपने पुरहि राम जस सेवक जाने ॥ सेवक कहेउ पुकारि सैं मातुनि लखि सादर जबै । दै आशीष जनु लषण सम हेतु कुशल पूछी सबै ॥ १०७ ॥

सब सुपास सबको भयो सुरसरि भरत अन्हाय । राम-सखा सेवा करी सबको बास दिवाय ॥ सबको बास दिवाय रयनि सब तहाँ गवाँई । एकहि खेवा पार किये केवट उतराई ॥ उतराई सब सैनयुत चले प्राग मारग लियो । रामदर्श लालच हृदय सब सुपास सबको भयो ॥ १०८ ॥

न्हाय प्रयाग प्रणाम करि दान दीन सुख पाय । भरद्वाज आश्रम गये मिले पूजि बैठाय ॥ मिले पूजि बैठाय कह्यो हम सब सुधि पाई । , कसन करहु यह भरत प्राणसम प्रिय रघुराई ॥ प्राण समान सनेह पद तजि गलानि जनि हृदय धरि । निशि ऋषि कीन सुपास सब प्रात नहाय प्रणाम करि ॥ १०९ ॥

रामनाम रसना ललित ध्यान राम सियरूप । श्रवण कथा रघुपति सगुण हृदय चरित्र अनूप ॥ हृदय चरित्र

अनूप परत पग मग डग डोलैं। शिथिल सनेह गँभीर राम सिय सुख भरि बोलैं॥ सुख भरि बोलैं रामसिय पथ्य अपथ्यहु निश्चलित। बर्षत सुर जय जय कहत रामदास रसना ललित॥ ११० ॥

सुन्दर बन गिरि गण मुदित मृग विहङ्ग कपि भाल। प्रफु- ल्लित प्रजा समाज सब राजा सुखद सुकाल॥ राजा सुखद सुकाल सकल तरु फल सुखदायक। सुधा सरिस सरि- वारि कर्म अघ औगुणखायक॥ औगुण छल दल दपट दुरि कपट द्विरद केहरि विदित। केवट भरत बताइयो सुन्दर बन गिरिगण मुदित॥ १११ ॥

नाथ विटप वट तरु तरे कौन छावनी राम। सिया बनाई वेदिका निज कर ललित ललाम॥ निज कर ललित ललाम राम शुभ आश्रम नीको। मुनिगण कहत पुराण सुनत दिनकरकुलटीको॥ दिनकरकुलमण्डन मही दुख खण्डव कहि जय हरे। रामसिया लक्षण लखौ नाथ विटप तरु वट तरे॥ ११२ ॥

जाय भरत पाँयन परे त्राहि त्राहि भगवन्त। अशरण- शरण प्रताप जग आदि मध्य नहिं अन्त॥ आदि मध्य नहिं अन्त प्रणत जनरक्षक स्वामी। शील स्वभाव विचारि शरण पद रज अनुगामी॥ अनुगामी शिशु औगुणी धाय आनि प्रभु पद धरे। त्राहि त्राहि रक्षक प्रभो जाय भरत पाँयन परे॥ ११३ ॥

भरत प्रेम रघुबर शिथिल उठे शरीर बिसारि। धनुष तीर पट शिर मुकुट जटा दये छिटकारि॥ जटा मुकुट छिट- कारि नयन उमँगे जल धारा। दुहुँ कर लियो उठाय मगन नहिं देह सँभारा॥ देह सँभार विचार तजि भाय लाय

उरमें बिकल। देखि दशासुरगण त्रसित भरत प्रेम रघुबर शिथिल॥ ११४॥

छोड़ि न आवत शिथिल दोउ भाय प्रेम परिपूरि। मन बुधि चित हित लायके करि कुतर्क सब दूरि॥ करि कुतर्क सब दूरि राम पुनि केवट भेटे। लषण भरत पुनि मिले शत्रुहन उर दुख मेटे॥ मेटि दुसह उर दाह दुख भरत शीश पद धरे दोउ। सकल सभा मुनिगण मगन छोड़ि न आवत मगन दोउ॥ ११५॥

केवट गुरु आगमन कहि राम उठे सब सङ्ग। धरे जाय मुनिपदकमल भेंटे मुनि धरि अङ्ग॥ भेंटे मुनि धरि अङ्ग चले आश्रमहि लिवाई। मातन भेंटे आय मनहु शिशुधेनु तुराई॥ धेनु तुराई गति मिली सिय सासुनके चरण गहि। रोदन करत बिलाप करि केवट गुरु न्टपमरण कहि॥ ११६॥

भये शुद्ध मुनि वचन कहि भरत राम सब भाय। सब समाज करुणा हरण मातु सचिव ऋषिराय॥ मातु सचिव ऋषिराय भरत विनती उठि कीन्ही। श्रीरघुवर सर्वज्ञ सकल गति मति रति चीन्ही॥ मति गति चीन्हि सनेह सब अवश करिय सोइ आजु लहि। चलिय अवध न्टपता करिय भये शुद्ध मुनि वचन कहि॥ ११७॥

आयसु न्टप बनको दयो सोई धरि शिर आज। तुमको पितु पुरको दयो पूरण राज समाज॥ पूरण राज समाज हमहुँ तुम आयसु कीजे। पालिय पितुको बैन जन्म अभिमत फल लीजे॥ अभिमत फलति न जग लह्यो पितुआयसु जिन शिर लयो। वचन न खण्डित सो करौं आयसु न्टप बनको दयो॥ ११८॥

जो श्रुति कहत सुसत्य है भरत कहत कर जोरि। पितु आयसु शिर राखिये परमधर्म शत कोरि॥ परमधर्म शत

कोरि तदपि पितु तियवश होई। सन्निपात अतिवात वालु-चो सेवत सोई॥ सेवत सोई रोगवश वचन कुयोग अपत्य है। समुझि नाथ कीजै उचित जो श्रुति कहै सो सत्य है॥ ११९॥

प्रभुरुख लखि मन प्रण कियो गये गङ्गके तीर। जल उठाय सङ्कल्प करि जो न चलैं रघुवीर॥ जो न चलैं रघुवीर देह तृणसम तजि डारौ। तन मन अर्पित देखि गङ्गतिय वेष सुधारौ॥ वेष सुधारी एक मुख ढिग उपदेश सुधारियो। सुनु विवेक रामानुजे प्रभुरुख लखि प्रणमन कियो॥ १२०॥

सत्य सच्चिदानन्द हरि राम सकल सुर ईश। ताहि न सुत भ्राता गनौ सर्वोपरि जगदीश॥ सर्वोपरि जगदीश शम्भु विधि हरिकारण कर। पद पताल शिर गगन लोक कर उर गिरि सरवर॥ गिरि सरवर धर अङ्ग सब भरण हरण थिति पूरि भरि। हठन करौ आयसु धरौ ब्रह्म सच्चिदानन्द हरि॥ १२१॥

जन पालन खलगण दहन चले विपिन सुरकाज। महीदेव श्रुति द्विज विकल मुनिपालन तपसाज॥ मुनि-पालन तपसाज जात दश कण्ठहि मारैं। करि प्रमाण निज कर्म अवधपुर तिलक सुधारैं॥ तिलक राज लीला करहि महो मोद सुख निर्बहन। उठहु राम आयसु करौ सुरपालन खलगण दहन॥ १२२॥

शुभ आनन सुनिकै भरत मगन भये सुख वन्द। भई अहष्ट अशीश दै श्रवण सुधा शुभ छन्द॥ श्रवण सुधा शुभ छन्द भरत आनन्द सिधाये। श्रीरघुवरपदकमल प्रेम धरि शीश नवाये॥ शीश नाथ बिनती करौ देहु पादुका शिर धरत। करत अटन तीरथ बिपिन शुभ आनन सुनि सिख भरत॥ १२३॥

मगन समाज समेत सो चित्रकूट बन देखि। सुखद राम वर बदन लखि जीवन सफल विशेषि॥ जीवन सफल विशेषि भरत श्रीराम बुलाये। बिदाहेतु गुरु वचन कहे सबकहँ समुझाये॥ सब प्रबोध भेंटे मिले चले समाज सनेहसों। अवधि आश पुर बास करि मगन समाज सनेहसों॥ १२४॥

राम भरतके प्रेमको को कविबरणत पार। नेम क्रिया दृढ़ धर्म्मब्रत कर्म्म परम आचार॥ कर्म परम आचार वरणि सहसानन हारे। मति जड़ वरणहिं काह मसक नभ अन्त विचारे॥ मशक अन्त किमि पावई गगन उड़ै करि नेमको। तुलसिदास शठ क्यों कहै राम भरतके प्रेमको॥ १२५॥

बसे अवधपुर लोग सब भरत बसे पुर त्यागि। नन्दिग्राम खनि अवनि थल ब्रत मुनि निशि दिन जागि॥ निशि दिन मुनि ब्रत साधि पादुका नृप करि सेवै। राजकाज शुभ साज करत पूजत द्विज देवै॥ देव मनावत अवधिहित राम समागम होय कब। तुलसिदास मुनि ब्रत धरे बसे अवधपुर लोग सब॥ १२६॥

इति अयोध्याकाण्ड

समाप्तम् २॥

अथारण्यकाण्डप्रारम्भः ॥



फटिकशिला सुन्दर सुखद बैठे सिय रघुवीर। सुमन लषण आनहिं सुभग सुरभित सुमुख समीर॥ सुरभित सुमुख समीर राम सिय भूषण साजे। अङ्ग अङ्ग प्रति रुचिर कामरति लखि छवि लाजे॥ लखि लाजे रति काम तन इन्द्र-सुवन भरमैं दुखद। परब्रह्म श्रीराम सिय फटिकशिला सुन्दर सुखद॥ १ ॥

समुझि मनुज अवगुण कस्यो हत्यो चोंच तन काग। रुधिर देखि धर सुमनको कीन्ह क्रोध करि त्याग॥ कीन्ह क्रोधकर त्याग लोक लोकन भ्रमि आयो। मति गति विह्वल विकल मोह माया भरमायो॥ मोहअन्ध नारद लख्यो पाय सोख पायँन पस्यो। ताहि त्राहि रचा करो समुझि मनुज अवगुण कस्यो॥ २ ॥

एक आँखि करि प्रभु तज्यो कर्म कीन बड़ घोर। कृपा-निधान समानको प्रणतपाल बरजोर॥ प्रणतपाल बर-जोर चरित सुर नर मुनि गावैं। चित्रकूट बस सुखद जानि सब आश्रम आवैं॥ आश्रम विदित विचारिकै विपिनसाज सब तन सज्यो। अत्रि जहाँ आश्रम गये चित्रकूटथल प्रभु तज्यो॥३ ॥

ऋषि अनन्द भेंटत भये देखि लषण सिय राम। आसन बैठारे मुदित पूजे अभिमतकाम॥ पूजे अभिमतकाम जानकी लेन लाईं। अनसूया पट दीन नित्य नूतन सुख-

दाई॥ सुखदायक उपदेश दैं पतिव्रत धर्मनि सब कये। आदर अस्तुति मुनि करो ऋषि अनन्द भेंटत भये॥ ४॥

विदा अत्रिसों प्रभु भये लिया लषण रघुराय। चले विपिन आगे सुखद महामुदित मन पाय॥ महामुदित मन पाय सकल मुनि भये सुखारी। निर्भय जप तप करहिं योग मखहोम विचारी॥ होम विचारि सँभारि हरि आशिष आदरसों दयो। मङ्गलमय कानन भयो विदा अत्रिसों प्रभु भयो॥ ५॥

बधि विराध मग सुख भये देखि जाय सरभङ्ग। परिपूरण लखि रामछवि प्रेम प्रफुल्लित अङ्ग॥ प्रेम प्रफुल्लित अङ्ग जोरि कर विनय बड़ाई। करि निहोर रचि चिता अपि चढ़ि दोन लगाई॥ दीन अपि तन अर्पिके राम लषण सिय उर लये। गयो धाम श्रीराम लखि बधि विराध मग सुख भये॥ ६॥

मिले सुतीक्षण धायके पुलकनयन जलधार। जेहि विधि शिव योगीश मुनि ध्यावत हृदि आगार॥ हृदि मन्दिर ध्यावत सदा आये लेबन आजु हैं। देखों नयन सनेह भरि सूरति सुख रघुराज हैं॥ अन्तर्यामी धारि मन सूरति नेह लगायके। राम जगाये प्रेम परि मिले सुतीक्षण धायके॥ ७॥

सङ्ग गयो मगमें चल्यो जात लखत प्रभु रूप। ऋषि अगस्ति आश्रम गये हर्षि सकल सुर भूप॥ हर्षि देखि सुर भूप मिले मुनि भाग बखान्यो। आसन आदर पूजि वेद श्रुति मति प्रभु जान्यो॥ जान ठानि सुख मानि प्रभु मधुर बचन बोल्यो भल्यो। शुभ अस्थान बताइये सङ्ग गयो मगमें चल्यो॥ ८॥

असमञ्जस सुखमई। खरदूषण पहँ गय विकल हाल समुझि धावत भई १३॥

करि प्रबोध सेना सजी खरदूषण मन क्रोध। राम बुझाये लषणको सिय गिरि राखिय शोध॥ सिय गिरि राखो शोधि दनुजसेना यह आई। भानुयान छपि गये धूरि नभमण्डल छाई॥ छाय धूरि नभमें रही दुन्दुभि दीरघ अति बजी। सीतहिं राखो कन्दरा करि प्रबोध सेना सजी॥ १४॥

धरहु धाय बोले वचन लखि छबि दूत पठाय। नारि अग्र करि मिलहु नृप कहे दूत यह आय॥ कहे दूत यह आय राम तेहि उत्तर दीन्हो। सुनि खरदूषण क्रोध सुभट लै दर्पित कीन्हो॥ दर्पित डारहिं शल बहु धरि सशूल असि शक्ति घन। मनहु मेघ बर्षत अचल धरहु धाय बोले वचन॥ १५॥

राम साजि शारङ्ग शर चले विशिख जनु व्याल। कटे विकट खल उर चरण भुज महि गिरहिं कपाल॥ भुज महि गिरहिं कपाल विकल भाजहिं लखि शायक। खलदल सभय सशोक निरखि खरदूषण धायक॥ धाय क्रोधि शायक तजे रहे पूरि दिशि गगन धर। तजि पावकशर जारि तम राम साजि शारङ्ग शर॥ १६॥

खलदल वृन्द निहारिकै प्रभु मन कीन विचार। रामरूप कीनो कटक सब लरि मर्‌यो अपार॥ सब लरि मर्‌यो अपार एक एकन धरि मारैं। कौतुक लखि सुर मगन रामको चरित निहारैं॥ चरित निहारि पुकारि सुर वर्षि प्रसून सुधारिकै। जय जय जय महिभारहर खलदल मरन निहारिकै॥ १७॥

खरदूषण त्रिशिरा परे शूर्पणखा लखि नैन। रोवत रावणकी सभा कहि कहि आरत बैन॥ कहि कहि आरत बैन देशकी सुरति बिसारी। घिर अरि डेरा करयो खबर

नहिं तोहिं सुरारी॥ खबरि न तोहिं निहारु मोहिं अङ्ग सकल शोणित भरे जुरे जाय भ्राता समर खरदूषण त्रिशिरा परे॥ १८॥

ताहि सङ्ग बरभामिनी रतिरम्भाछवि छीन। रमा भारती शिवतिया लागहिं सकल मलीन॥ लागहिं सकल मलीन कोटि शशिसम द्युति शोभा। खग मृग पशु जड़ जीव वाहि लखि विकल न को भा॥ विकल नारि नर मुनि मगन तजत योग जप यामिनी। दामिनि वरणत द्युति कहां ताहि सङ्ग बरभामिनी॥ १३॥

अवनि असुर खण्डित करैं प्रबल शत्रु वरिवण्ड। देखत बालक काल सम अति विशाल भुजदण्ड॥ अति विशाल भुजदण्ड मदन जनु वेष सँवारैं। मुनि मन भये अनन्द विपिन विचरत भय डारे॥ भय डारे मुनि जय करहिं खल-दल दलि सुर दुख हरैं। भूपकुमार अपार छवि अवनि असुर खण्डित करैं॥ २०॥

करि प्रबोध रथ चढ़ि चल्यो रावण मन अनुमानि। जहँ मारीचस्थान शुभ मन्त्र तन्त्र मन ठानि॥ मन्त्र तन्त्र मन ठानि गयो उठि आदर कीन्हो। मारीचहु मन लख्यो कछू स्वारथ मन दीन्हो॥ स्वारथ घाते बिचारि जिमि अङ्कुश धनु अहि छल छल्यो। नवै बिलारि विचारि छल करि प्रबोध रथ चढ़ि चल्यो॥ २१॥

तात हेतु स्वारथ करौ कथा समस्त सुनाय। हरहुँ बाम न्टप तनयकी बैर सकल बुझि जाय॥ बैर सकल बुझि जाय होउ मृगकपट बनाई। भगिनी लखि दुख मोहिं करहु बन मोरि सहाई॥ मोरि सहाय विचारिकै निज कुल मङ्गल मन धरौ। बात जात घातक भयो तात हेतु स्वारथ करौ॥ २२॥

सुनु सुत याहि न नर गनो मैं जानत बल ताहि। बिन-फरसर मोहिं मारियो गयों समुद निरवाहि ॥ गयों समुद निरवाहि मारि ताड़का सुबाहो। भञ्जो शिवको दण्ड जनक-कन्यका बिवाहो ॥ जनकसमाज नृपाल बहु मान मर्दि भृगु-पति हनो। ताहि बिरोध न कुशल है सुनु सुत ताहि न नर गनो ॥ २३ ॥

ज्ञान सिखावत मोहिंकहँ मैं सुर नर वश कीन। उत्तर देहि न उठि चले डरडरात पुरतीन॥ डरडरात पुरतीन समुझि मन देखि बिचारी। यहि मारे यत नरक राम कर सुरपद भारी॥ सुरपद भारी पाय हौं चल्यो नाय शिर राम तहँ। रावण आतुर चढ़ि चल्यो ज्ञान शिखावत मोहि-कहँ ॥ २४ ॥

मायामय छाया करौ सिय आयसु उर मानि। मृग देख्यो शुचि हेममय खचित रतन मणिखानि ॥ खचित रतन मणि-खानि लखत जानकी सुखारी। यहि हति सुन्दर छाल करिय प्रभु धनुशरधारी॥ धनुशरधारी मन समुझि जानत आगमकी घरी। चले लषण सिय सापिके मायामय छाया करी ॥ २५ ॥

मृग मारयो दूरी निकरि राम कठिन शर तानि। हा लक्ष्मण प्रथमै कह्यो पीछे राम बखानि ॥ पीछे राम बखानि कहत जानकी बिचारी। कही लषणसों बात आय तव सङ्कट भारी॥ सङ्कटवश सुमिरत तुम्हैं जाहु तुरत धनुबाण धरि। असुरसैन्य अरिदल ग्रसे मृग मारयो दूरी नि-करि ॥ २६ ॥

राम न सङ्कट कहुँ परै काल जुरै रणमाहिं। सकल सुरा-सुर लरि मरैं समर जीति हैं नाहिं॥ समर जीति हैं नाहिं

सोच मनसाँस निवारो। राम दीनता वचन वदन कबहूँ न उचारो। कबहुं न संशय आनिये सत्य वचन मेरे धरो। हतो देव निशिचर विपिन राम कबहुं सङ्कट परो ॥ २७ ॥

कह्यो वचन सहि नहिं गयो उठयो रेख धनु खाँचि। यती-वेष दशकंठ शठ आयो सियढिग याँचि॥ आयो सिय-ढिग याँचि जानकी ताहि बुलायो। देन लागि फल मूल दुष्ट तब वचन सुनायो॥ वचन सुनाय सुखद कहि बँधो भीख नहि कहुँ लयो। भावीवश सिय रेख तजि वचन कह्यो नहिं सहि गयो ॥ २८ ॥

रेख त्यागि सिय जब गई रथपर लई चढ़ाय। गल्यो गगन भयते मगन इत उत देखत जाय॥ इत उत देखत जाय सिया रावण जब जान्यो। कहत पुकारि कृपाल नाथ कहुँ दूरि परान्यो॥ दूरि परान्यो लषण कहँ मोहिं दशानन हरि लई। परी विवश दशकण्ठके रेख त्यागि जब सिय गई ॥ २९ ॥

राम राम कहि खग चल्यो गृध्र जटायू देखि। रोक्यो रथ रघुवरतिया दशशिर हरो विशेखि॥ दशशिर हरो विशेषि मारि रथ भूतल डार्यो। सीतहि लई छुड़ाय विकल दशशिर महि पार्यो॥ दशशिर पार्यो भूमितल छत्र चूर उर थल हल्यो। मुकुट अस्त्र शस्त्रहि दपट राम राम सुनि खग चल्यो ॥ ३० ॥

अति रिस रावण रण रच्यो तीच्छण काढ़ि कृपान। दल्यो पच्छमहि खग गिर्यो कहि सुख कृपानिधान॥ कहि सुख कृपानिधान साजि स्यन्दन सिय लीन्हों। लै नभपथ फिरि चल्यो गीध विह्वल गति कीन्हो॥ विह्वल गति कपि सिय

लखे नूपुर दै कपि कर सच्यो। तरु अशोकतर राखिक अति रिस रावण फिरि रच्यो ॥ ३१ ॥

लक्ष्मण बात नीकी नहीं बन सिय आये त्यागि। असगुन सम मन होत अति सिय बिन उर बिरहागि॥ सिय बिन उर बिरहागि लक्ष्मण पद गहि समुझाये। शोचत आश्रम देखि नयन उमड़े जल छाये॥ उमड़े जल छाये बिकल खोजत गिरि वन सर मही। रुधिर धनुष आगे पर्यो लक्ष्मण बात नीको नहीं॥ ३२ ॥

राम राम रसना रटै लख्यो गीधपति जाय। कही कथा सिय हेतु गति रामनयन जल छाय॥ रामनयन जल छाय गोद धरि बचन उचारे। परमारथ तुम तात प्राणधन तृण करि डारे॥ तृण समान प्राणनि दयो कोपरहित रण-महँ कटै। जियो भोग भोगो जगत राम राम रसना रटै॥ ३३ ॥

दर्शलागि जीवन रहेउ भाग उदय रघुराय। जेहि बिरञ्चि शिव सेवहीं लियो गोदमोहि आय॥ लियो गोद मोहि आय राम कहि प्राण गँवाये। भयो तुरत हरिरूप चारि भुज अस्त्र सुहाये॥ अस्त्र सबै शिर मुकुट वर पीताम्बर भूषण गहेउ। जोरि पाणि अस्तुति करत दर्शलागि जीवन रहेउ॥ ३४ ॥

परमधाम गो गीधपति क्रिया कीन्ह श्रीराम। चले बिरहअङ्कुर भये बिपिन शावरीधाम॥ बिपिन शावरीधाम अर्घ आसन सब साजे। धूप दीप फल सुजल धरे रघुपति-के काजे॥ सब सप्रेम पायन परी दर्श पाय पावै न गति। राम तुम्हारे रूप लखि परमधाम गो गीधपति॥ ३५ ॥

काठ साजि रचिकै चिता सिय सुधि कही बहोरि।

शवरी जरि सुरगति गई क्रिया करी प्रभु कोरि॥ क्रिया करी प्रभु कोरि चले बन दूनौ भाई। मुनिगण मिलत अनेक दर्श अभिमतफल पाई॥ पावहि अभिमत जीव जु करहि योग जेहि प्रभु निता। साजि साजि सुरगति लही काठ शावरी रचि चिता॥ २६॥

रामसिया खोजत गये पम्पा सुभग तड़ाग। सुन्दर जल तरु बिहँग मृग मुनिगण सदन सुवाग॥ मुनिगण सदन सुवाग करत जप तप मन लाई। देखि सरोवर मुदित कीन मज्जन रघुराई॥ रघुराई मज्जन कर्‌यो नारद मुनि आवत भये। तुलसिदास सुर सुभग सर रामसिया खोजत गये॥ २७॥

इति अरण्यकाण्ड समाप्तः॥

अथ किष्किन्धाकाण्ड प्रारम्भ।

चले बिपिन लक्ष्मण सहित मिले पवनसुत आय। ब्रिप्र रूप पूछत भयो को तुम कहौ बुझाय॥ को तुम कहौ बुझाय विपिन सुकुमार सलोने। नृप दशरथके सुवन तासु आयसु तजि भौने॥ तजेउ भवन आये बिपिन नारि गई शोध न लहत। खोजत हम द्विज कवन तुम चले बिपिन लक्ष्मण सहित॥ १॥

लै सुग्रीव मिलाइयो प्रभु गुण मन अनुमानि। कही कथा सब परस्पर नूपुर दये बखानि॥ नूपुर दये बखानि राम लोचन भरि आये। विरह विकल प्रभु देखि कीश बहु विधि समुझाये॥ समुझाये सुग्रीव अति राम लषण सुख पाइयो। प्रभु भेंटे हनुमन्त उर लै सुग्रीव मिलाइयो॥ २॥

प्रभु बोले कारण कवन बसत विपिन कपिराज। कथा कही सब बालिकी कोपि कहा रघुराज॥ कोपि कहा रघुराज बालि एकहि शर मारौं। सम्पति ऋधि तिय सहित तोहि कपि तिलक सँवारौं॥ तिलक सँवारौं कालहि नहि किष्किन्धा नृपता भवन। तौ न धनुष शर कर धरौं मित करिय कारण कवन॥ ३॥

तब सुग्रीव दिखाइयो बालि महा बल वीर। गर्जि नगर जान्यो तबहि चल्यो क्रोधि रणधीर॥ चल्यो क्रोधि रणधीर लरे पुनि दूनौ भाई। शरणागत प्रण समुझि बाण मास्यो रघुराई॥ मास्यो बाण प्रमाण करि गिस्यो अवनि मुरक्षाइयो। रामरूप लोचन पुलकि तब सुग्रीव दिखाइयो॥ ४॥

श्याम रामछवि उर धरी बाणी कहत कठोर। नर गति हरि गति तजि दई सम प्रकाश सब ठौर॥ सम प्रकाश सब ठौर जगत अप्रिय कछु नाहीं। जो अप्रिय तव होय सकल छक सङ्ग बिलाहीं॥ सङ्ग रङ्ग नहि चाहिये विधि पिपील रचना करी। जयति हरे श्रीराम कहि श्याम रामछवि उर धरी॥ ५॥

प्राण गये श्रीराम कहि नारि विकल पुरलोग। सुग्रीवहि आयसु दयो करहु मृतककर योग॥ करहु मृतककर योग लषण सबको समुझायो। राज हेतु सुग्रीव अनुज सँग नगर पठायो॥ नगर बुलाये द्विज सकल अङ्गदादिकपि बोध

लहि। बालिशोच दूषण हरौ प्राण गये श्रीराम कहि॥ ६॥

राम नाम कहि नृप करौ तिलक सारि शिरताज। राम कृपानिधि जगतमें बिरद गरीबनिवाज॥ बिरद गरीबनिवाज कियो सुग्रीव सुखारौ। गिरिबन बिकल बिहाल बालि डर कम्पित भारौ॥ कम्पित डर निरभय नहीं जात दुसह ज्वर डर जरयो। धाम बाम नृप ग्रामको रामनाम कहि नृप करयो॥ ७॥

राजनीति कहि प्रभु रहे शैलप्रवर्षण आय। अनुज सहित सुन्दर सदन राखे देव बनाय॥ राखे देव बनाय निरखि वर्षाऋतु आई। घनघमण्ड नभ घोर मनहु रविपर निशि धाई॥ निशि धाई रवि भजि गये नीरबुन्द बाणन गहे। तड़ित कृपाण सुइन्द्रधनु राजनीति कहि प्रभु रहे॥ ८॥

करि मनोज डेरा जगत सजि आयो करि सैन। असित पीत सित घन अरुण तनि बितान सुखचैन॥ तनि बितान सुख चैन तड़ित ध्वज सुन्दर राजै। निशि दिन घन घहरात मनहु बर दुन्दुभि बाजै॥ दुन्दुभि बाजै मोर पिक बक दादुर बन्दी लगत। बिरहवन्त कारण सज्यो करि मनोज डेरा जगत॥ ९॥

सुरपतिके गिरिगण ग्रसे बुन्दबाण झरिलाय। कहुँ कहुँ मारत बज्रधर घनगज शीश चढ़ाय॥ घनगज शीश चढ़ाय मोर हर बल पुर आये। बाजे नौबति जीति कोकिला सुयश सुनाये॥ सुयश जनात बितान तनि बेलि बिटप गृह गिरि बसे। मुद्रित करि पाषाण जड़ सुरपतिके गिरिगण ग्रसे॥ १०॥

के समुद्र महिपर चढ़यो महि मुद्रित कर[illegible]न। सर सरिता जलदल परे शरपञ्जर महि कौन॥ शरपञ्जर महि

कौन तड़ित बड़वागिनि मानो। बर्षत नभ चढ़िवारि असित गिरि दिग्गज जानो॥ दिग्गज कल्पहि घन सदल नाद वाद दृष्टिदिवि बढ़्यो। कम्पमान महि गहि धरी कै समुद्र महिपर चढ़्यो॥ ११॥

शरद्भूप आयो मिलन धवल रूप वृति साजि। कमल कोक खञ्जन चतुर दूत उठे जग बाजि॥ दूत उठे जग बाजि चन्द्र जनु छत्र सुहायो। सरि सर निर्मल बारि पाँवड़े पावस नायो॥ पावस दीन्हो तिलक जग शरदराज राजत थलन। पावस गयो प्रणाम करि शरद्भूप आयो मिलन॥ १२॥

सीय शोध अब लीजिये जाहु जहाँ कपिराज। खबरि बिसारी सुख सुपुर पाय नारि धन राज॥ पाय नारि धन राज बालि थल तुम्हैं पठाऊं। कर धरि कौनो सखा ज्ञान दै मन समुझाऊँ॥ मन समुझाय समेत कपि आप गमन पुर कीजिये। बानर भाल पठाय करि सियाशोध अब लीजिये॥ १३॥

लक्ष्मण चले लिवायके प्रीति प्रबोध रिसाय। बानर भालु बुलायके गये जहां रघुराय॥ गये जहां रघुराय मिले पाँयन कपि नाये। रघुपति हँसि मृदु प्रकृति पुलकि गहि कण्ठ लगाये॥ कण्ठ लगाय बुझाय कपि विनय करी चित लायके। बानर भालु विशाल भट लक्ष्मण चले लिवायके॥ १४

कपि लक्ष्मण सबसों कहेउ सिय सुधि खोजहु जाय। पाख दिवस बिन सुधि लिये हमहि मिल्यो जनि आय॥ हमहि मिल्यो जनि आय बहुरि अङ्गदहि बुलाये। तुम मारुत-सुत साथ जाहु दक्षिण शिरनाये॥ दक्षिण सिय शोधहु सुभट भालु नील नल सुख लह्यो। मुँदरी दै हनुमन्तको प्रभु कपि लक्ष्मण सब कह्यो॥ १५॥

चले सुभट व्यङ्कट बिकट खोजत गिरि सर खोह। राम-काज लवलीन मन बिसरयो तनकर छोह॥ बिसरयो तनकर छोह सघन बन जाय भुलाने। तृषावन्त भे विकल बिना जल सब अकुलाने॥ अकुलाने हनुमन्त लखि चल्यो ववर पैठयो सुभट। कथा सुनाई शशि प्रभा चले सुभट व्यङ्कट बिकट॥ १६॥

जल फल खाय प्रणाम करि तेहि पठये जलतीर। सोस प्रेम पहुंचो तहां लक्ष्मण श्री रघुबीर॥ श्रीरघुकुलमणि बीर पठै बदरीवन दीन्हो। कपि सब सागरतीर सोय हित चिन्ता कीन्हो॥ चिन्ता कीन्हो कपिन सब सम्पाती लखि कहत डरि। धन्य जटायू सुभटको जल फल खाय प्रणामकरि॥ १७

सुनि सब कथा प्रणाम करि गये मुदित सम्पाति। भये पच्छ जल दीन शुचि कही पच्छ गति भांति॥ कही पच्छ गति भांति धरहु धीरज सब भाई। पैहौ सीतहि तबहि पार सागर जो जाई॥ सागर शत योजन उलधि प्रबल बीर जाइ हि जो परि। सो सिय पावहि सत्य सुनि कपि सब कथा प्रणाम करि॥ १८॥

गयो कहत यह गीधपति कपि सब करत बिचार। बहु रत संशय जिय कहैं अङ्गद जातो पार॥ अङ्गद जातो पार कहत ऋच्छेश बुढ़ाई। नल औ नील सकोच जानकी कौन दिखाई॥ कौन दिखाई जानकी पुनि प्रचारि कह ऋच्छ-पति। कहा समुद हनुमन्त तोहि गयो कहत यह गीध पति॥ १९॥

इति श्रीकिष्किन्धाकाण्ड समाप्तः।

अथ सुन्दरकाण्ड प्रारम्भ ।



भयो हेमगिरिको शिखर सुनत ऋक्षपति बयन। चढ़यो तमकि भूधर अधर फांकि अरुण करि नयन॥ अरुण नयन भुजदण्ड मसकि भूधर जब चंप्यो। जल पतालको कढ़यो शेषकच्छपपर कम्पयो। कम्पि शेष शिरनमि गयो कूदि चल्यो बलवन्त फिरि। मारि दुष्ट गिरि परसि पग भयो हेमगिरिको शिखरि॥ १॥

पटकि लङ्किनी बामको पैठयो सिय हित बीर। लखो न पुर सिय घर घरन खोजि श्रमित रणधीर॥ खोजि श्रमित रणधीर बिभीषण भेद बतायो। गयो बाटिका सिय तहां पुनि रावण आयो॥ रावण आयो देखि कपि तरु बैठो बिश्रामको। कहे बचन रावण सुने पटकि लङ्किनी बामको॥ २॥

सिय उत्तर ताको दयो गयो सदन मतिमन्द। सिय दुख लखि दै मुद्रिका देखो मारुतनन्द॥ देखो मारुत नन्द जानकी कथा सुनाई। मातु धरिय मन धीर कह्यो निज मुख रघुराई॥ रघुराई आवन चहत कीशकटक दलबल भयो। सुत समान तेरो कटक सिय उत्तर ताको दयो॥ ३॥

राम प्रताप सँभारिकै भयो हेमगिरि रूप। रघुबर कृपा बिचारु तृण होय बज्र अनुरूप॥ होय बज्र अनुरूप सर्पशिशु गरुड़हि मारै। तिमिर खाय शशि रविहि मशक गिरि हेम उखारै॥ मशक सुमेरु उखारही समुद पिपील निवारिकै। जरो जगत खद्योत तव रामप्रताप सँभारिकै॥ ४॥

बूड़ि जायँ खर कुम्भजो शेष डारि महिभार। वारि खाय बड़वाअनल अशु चन्द्र शिर डार॥ अशु चन्द्र शिर डारि चारि-मुख सृष्टि नशावै। गिरि सर सागर डारि धरणि तजि धीरज धावो धीरज धरणी उर तजै जलहि मिलै गिलि ट्वै रजो। रामबाण खल ना बचे बूड़ि जायँ खर कुम्भजो॥ ५॥

मातु देहु आयसु मुदित लखौं वाटिका जाय। सुन्दर फल लागे बिटप भोजन करौं अघाय॥ भोजन करौं अघाय जानकी उत्तर दीन्हो। सुत रखवारे प्रबल पवन परवेश न कीन्हो॥ पवन शूर परवेश नहिं लखि न सकहिं रवि शशि उदित। कह कपि यह भय तनक नहिं मातु देहु आयसु मुदित॥ ६॥

करि प्रणाम कूद्यो सुभट लग्यो फूल फल खाय। मूल चलावै समुदमहँ रक्षक पहुँचे जाय॥ रक्षक पहुँचे जाय मर्दि महि गर्द मिलाये। पुरी परयो अतिशोर अक्ष रावण पठवाये॥ अक्ष वृक्ष लै कपि हन्यो मेघनाद आयो निकट। भिरे प्रबल रघुपति सुमिरि करि प्रणाम कूद्यो सुभट॥ ७॥

ब्रह्मबाण कपि साधिके धरि लै गयो बहोरि। रावण आगे करि दियो कहि कटु बचन करोरि॥ कहि कटु बचन करोरि कह्यो रावण तब बानो। को मर्कट दूत कहाँ काहि बल फलकर हानो॥ फल दल मूल विध्वंसि करि रण कीन्हो अवराधिके। कहि कपि तव सुत छल कयो ब्रह्मबाण कर साधिके॥ ८॥

विधि हरि हर दिगपाल सब व्याल यक्ष गन्धर्व। पितृ प्रेत पशु मनुज जग सचराचर सुर सर्व॥ सचराचर सुर सर्व गगन धरणी गिरि घेरे। मैं तैं पुर परिवार धाम धन तिय सुत तेरे॥ तिय सुत तेरे लोक सब भये रहे पुनि होहिं

सब। तासु दूत जेहि जग सृज्यो विधि हरि हर दिग्पाल सब ॥ ९ ॥

अति रिस पावक बोरिके तेल बस्त्र घृत बोरि। चढ्यो अटारीकनककी विधिघर करते तोरि ॥ विधिघर करते तोरि सकल पुर दीन्हो आगी। छण महँ सब पुर बारि बिभीषण भवन न लागी॥ भवन भस्म भूषण भये समुद्र सुदर्प निवारिके। सिय मणि लै कूदत भयो अति रिस पावक बारिके ॥ १० ॥

करि प्रबोध साथी सकल मधुबनके फल खाय। हर्षि गहे प्रभुपदकमल उर भेंटे रघुराय॥ उर भेंटे रघुराय दीन्ह मणि प्रभु हँसि लीन्हो। सियदुर्दशा निहारि पवनसुत प्रकटित कीन्हो॥ प्रकटित कीन्हो सियदशा सुनत हाल रघुपति बिकल। बिजय करिय सिय आनिके करि प्रबोध साथी सकल ॥ ११ ॥

रामबचन कपिदल चल्यो दिग्गज अहि सकुचन्त। भालु बली मर्कट सुभट यूथ यूथ बलवन्त ॥ यूथ यूथ बलवन्त अन्त को पावहि लेखा। राम कटकको बिभव रूप जानहि जिन देखा॥ जिन देखा ते जानहीं नभ अहि पुर भूतल हल्यो। समुद्र तीर डेरा परे रामबचन सुनि दल चल्यो ॥ १२ ॥

बचन सुनत रावण कह्यो मन्त्री मित्र बुलाय। मन्त्र कहौ पूछत सबहि कह्यो बिभीषण आय॥ कह्यो बिभीषण आय मन्त्र मणि मानिय मेरो। सीतहि सौंपहु जाय मिलहु रघुनाथ सवेरो॥ सुनि गुनि उठि लातन हत्यो मिलहि भ्रात को उर दह्यो। चल्यो हृदय अनुमान करि बचन सुनत रावण कह्यो ॥ १३ ॥

मन गलानि हरिहै कवन चल्यो ताकि प्रभु पांय। दीन

बन्धु दाया हृदय लीन्हे तुरत बुलाय॥ लीन्हे तुरत बुलाय तिलक पुनि निज कर साग्यो। रावण पुर सब दियो मिल्यो जब शीश उताग्यो॥ शीश उतारे शिव दयो तब पाये लङ्का भवन। सो पुर धन पांयन परत मन गलानि हरि है कवन॥ १४॥

सखा निकट बैठारिके पूछो सागर पाय। केहि विधि उतरै कपिकटक तेहि विधि करिय उपाय॥ तेहि विधि करिय उपाय मन्त्र करि व्रत तट कीन्हो। क्षुद्र न द्रवहिं विशेषि तबहिं प्रभु धनु शर लीन्हो॥ धनु शर उर माग्यो विकल मिल्यो रत्न लै आयकै। पन्थ देहि कपिकटककहँ सखा निकट बैठायकै॥ १५॥

नाथ सुगम मारग रच्यो जल महि पावक पौन। विटप शैलसर जड़ रचे इनको सिखवत कौन॥ इनको सिखवत कौन करहु प्रभु एक उपाई। गिरिगण बाँधहिं सेतु नील नल इनहुँ भाई॥ इनहुँ भाई बांधि हैं शैल सकल मर्कट सच्यो। आपु प्रताप सहाय मम नाथ सुगम मारग रच्यो॥ १६॥

सुनि साँचे सागर वचन कपिपति कीश बुलाय। धावहु गिरि तरु आनिकै नलहि देहु सुख पाय॥ नलहि देहु सुख पाय धरहिं गिरि सागरमाहीं। सुनि आयसु कपिवृन्द चले चहुँ दिशि भ्रम नाहीं॥ भ्रम नहिं शिर वङ्गुल करहिं कोटि कोटि गिरि धरि रचन। देहिं आनि नल नीलकहँ सुनि साँचे सागर बचन॥ १७॥

इति सुन्दराकाण्ड समाप्तः॥

हारि गये दल बल असुर चल्यो बालिसुत बीर। मुकुट धरे प्रभु पाँयतर मिले हर्षि रघुबीर॥ मिले हर्षि रघुबीर बालिसुत कारण भाख्यो। गढ़ घेरयो करि मन्त्र जहाँ लायक तेहि राख्यो॥ राखि बीर पुर भयो दयो लङ्क अति प्रबल धुर। भयो युद्ध अकुलित समर हारि गये दल बल असुर॥ ५॥

मेघनाद योधा सुभट लक्ष्मण हन्यो विचारि। भई मूर्छा प्रभु लखे हनुमत लीन प्रचारि॥ हनुमत लीन प्रचारि औषधी लेन पठायो। दुष्ट हन्यो कपि बीच शैल शिर राखि सिधायो॥ शैल शीश देखत भरत लागि मारि सायक विकट। राम कहत भेंटत कह्यो लखण थाय पीड़ा सुभट॥ ६॥

अति सनेह भेंटयो भरत कह्यो कीश चतुसाण। विश-म होहि मारग थाज पठवौं तोहि प्रमाण॥ पठवहुँ तोहि प्रमाण समुझि पुनि कहत कपीशा। सब प्रताप ले गाय जाउँ जहँ प्रभु जगदीशा॥ प्रभु जगदीश विचारिकै दोउ पग धरि पायन परत। धन्य धन्य हनुमन्त जग अति सनेह भेंटयो भरत॥ ७॥

लक्ष्मण उठि ठाढ़े भयो कीन्हो वैद्य उपाय। सुनि रावण संशय भयो भ्राता जाय जगाय॥ भ्राता जाय जगाय कहे कारण सब जेते। तेहिं तब कह्यो न मनुज ब्रह्म प्रभु कपि सुर तेते॥ कपि सुर रघुबर ब्रह्म हैं तेहि विरोध को नहिं गयो। यह कहि रण मण्डल गयो लक्ष्मण उठि ठाढ़े भयो॥ ८॥

मारि दुष्ट रण हर्षिसबै सुर दुन्दुभी बजाय। लक्ष्मणको आयसु दियो लाल लङ्कपुर जाय॥ लाल लङ्कपुर माहिं हतहु रावण सुत जाई। आयसु शिर धरि लखण हत्यो देवन दुख-

दाई॥ दुखदाई मारे सकल रावण मन शोचत चले। जय जय रघुवंशमणि मारि दुष्ट रण दलमले॥ ९॥

रण रावण आतुर चल्यो असुरसेनदल साथ। करत युद्ध देवन डरत धरत शरासन हाथ॥ धरत शरासन हाथ चलत महि दिग्गज डोलैं। चुभित उदधि जल छन्न शैल खसि महिधर बोलैं॥ महिधर बोलैं अति सभय रबि मुद्रित सब थल हल्यो। भुज प्रचण्ड रण मण्डियो रावण रण आतुर चल्यो॥ १०॥

श्रीरामरावणयुद्धको को कवि पावहि पार। शेष शारदा निगम बिधि शङ्कर मुनि अवतार॥ शङ्कर मुनि अवतार कल्प कोटिन कहि हारैं। बल दल समर प्रचण्ड मन्द जे कहन बिचारैं॥ कहन बिचारैं मति कवन सब कहि हारे बुद्धको। तुलसिदास सो किमि कहै रामरावणयुद्धको॥ ११॥

प्रभु मारयो प्रभु ह्वै गयो ताको बरणै कौन। बल पौरुष अरु बीरता जानत रबि शशि पौन॥ जानत रबि शशि पौन बड़ो रण रावण कीन्हो। निज दल सम गति ताहि परमपद पावन दीन्हों॥ पावन पद लखि देव सब पुष्प वृष्टि दुन्दुभि दयो। करहिं विनय सादर सकल प्रभु मारयो प्रभु ह्वै गयो॥ १२॥

सियसङ्कट दूरी करयो राज बिभीषण दीन। सत्य सुयश कपिको कह्यो शपथ सीय शुचि कीन॥ शपथ सीय शुचि कीन चढ़े पुष्पक रघुराई। कपि सिय लषण समेत चले सुर जयति सुनाई॥ जय जय प्रभु खलदल दल्यो सुर मुनि द्विज महि दुख हरयो। अमर नाग भूतल सुखी सियसङ्कट दूरी करयो॥ १३॥

पूजा शङ्करकी करी सेतु सिया दरशाय। पञ्चबटी कुश्थ-जहि मिलि अत्रि आदि ऋषिराय॥ अत्रि आदि ऋषिराय मिले अनसूयहि जाई। आशिष आयसु पाय चले आगे रघुराई॥ रघुराई आये तहाँ चित्रकूट मङ्गल घरी। पै-अन्हाय मुनिगण मिले पूजा शङ्करकी करी॥ १४॥

आयसु पायो मुनि दयो चले हर्षि श्रीराम। यमुनहि पूजि सप्रेममय प्रमुदित कीन्ह प्रणाम॥ कीन्ह प्रयाग प्रणाम मिले मुनिगण प्रभु जाई। करि मज्जन सिय सहित बिप्र मान्यता बड़ाई॥ मान बड़ाई पूजिकै पुनि बिमान आतुर गयो मिले निषादहि गङ्गतट आयसु पायो मुनि दयो॥ १५॥

कपि हनुमन्त पठाइयो भरत कुशलता देखि। आवत सिय लछ्मण सहित यह तुम कहो विशेषि यह तुम कहो विशेषि प्रातउठि भरत निहारौं। पुरवासि न पुनि मिलौं मातुको शोच निवारौं॥ शोच निवारौं अवधको सब प्रकार समुझाइयो। भरत प्रबोधन हेत प्रभु कपि हनुमन्त पठाइयो॥ १६॥

पुनि निषाद उर लाइयो रघुपति करुणापुञ्ज। लै आयो मन्दिर परम सुजल धोय पदकञ्ज॥ सुजल धोय पदकञ्ज रुचिर आसन बैठारयो। धूप दीप नैवेद्य फूल फल अङ्कुर धारयो॥ अङ्कुर खाये प्रेम युत राम बहुत सुख पाइयो। प्रात समाज बिमान चढ़ि पुनि निषाद उर लाइयो॥ १७॥

भरत देखि हनुमन्त जब कृश शरीर दुख दीन। जटा शीश मुनिव्रत धरम प्रेम पाँवरी लीन॥ प्रेम पाँवरी लीन राम सिय वदन उचारो। कुश आसन आसीन बसन भूषण तजि डारो॥ भूषण तजि भजि नाम प्रभु अवधि अन्त दिन आहि रव। अहह मोहि धिक धिक कहत भरत देखि हनुमन्त जब॥ १८॥

सुनहु भरत हनुमन्त कह्यो आय लछमण सिय राम। जीति असुर समेत मङ्गल कुशल जीति असुर संग्राम॥ जीति असुर संग्राम देव सब स्वथल बसाये। राज विभीषण दीन्ह सुयश नारद शिव गाये॥ नारद शारद सरस सुक प्रभु कीरति पावन लही। सो प्रभु आवत अवधपुर सुनहु भरत हनुमत कही॥ १९॥

सुनत भरत आनँद लह्यो पर्म भावती बात। चकित थकित सुख सपनधौं कहत कोई साचात॥ कहत कोई साचात भरत पुनि नयन उघारे। पुनि हनुमत कह राम अवध आये सुखभारे॥ सुखभारे उठि भरतकर हिये भेंटि आनँद गह्यो। अश्रुपात पातन पुलकि सुनत भरत आनँद लह्यो॥ २०॥

आवे यह सन्देश लै कहा देउँ तोहिं तात। यहि पटतर त्रयलोक्य नहिं कह्यो अमृत सम बात॥ कह्यो अमृत सम बात रामसिय कुशल विशेषी। लछमण सहित सुवेष अवध आवत तुम देखी॥ आवत देखि विशेषि तुम कह हनुमन्त प्रदेश लै। मिले बहुरि कपि कहउ गनि आवै यह सन्देश लै॥ २१॥

अवध आय प्रकटी सबै गुरु पुरजन समुझाय। आबु कुशल आये लषण सीय सहित रघुराय॥ सीय सहित रघुराय सजहु मङ्गल पुरनारी। वन्दनवार पताक चर्म चामर गज भारी॥ गज भारी रथ तुरग सँग साजि भरत मङ्गल तबै। चले नगर बाहिर मिलन पुरशोभा प्रकटी सबै॥ २२॥

भरत सङ्ग हनुमन्त लै देखत गगन विमान। नगर नारि नर देखि कै उतरे कृपानिधान॥ उतरे कृपानिधान मिले गुरु प्रथम गोसाँई। आशिष देय सनेह कुशल पूछी मुनि-

राई॥ मुनिराई प्रभु भेंटिकै भरत हृदय भगवन्त लै। अति सनेह पूरे मगन भरत सङ्ग हनुमन्त लै॥ २३॥

मिले सकल पुर जन मुदित राम चरित यह कौन। सब जानत प्रथमहि मिले हमकहं राम प्रवीन॥ हमकहँ राम प्रवीन ऊँच मध्यम नर नारी। यथा योग्य मिलि सबहि बहुरि भेंटी महतारी॥ भेंटी महतारी सबै प्रथम कैकयी पर्म हित। बिरहबिथा नाशी सकल मिले सकल पुरजन मुदित॥ २४॥

इति लङ्काकाण्डसमाप्तः॥

अथ उत्तरकाण्ड प्रारम्भ।

राम अवध आये कुशल घर घर मङ्गल साज। पुरी भई अमरावती रामराज्यके काज॥ रामराज्यके काज भरत सब साज सजाई। सुर गन्धर्व मुनीश सकल आये सुरसाई॥ सुरसांई मङ्गल सजे बजे अवध दुन्दुभि विमल। बर्षि सुमन जय जय कहत राम अवध आये कुशल॥ १॥

शुभ सिंहासन शुचिबन्यो रघुपति बैठे आप। भूषण मणि-गण जगमगत कोटिन भानुप्रताप॥ कोटिन भानुप्रताप वेदध्वनि विप्र उचारैं। छत्रचँवर हनुमान छत्र भरतादिक धारैं॥ भरतादिक सुखमय अगम लिये आई भूषण घन्यो। रामसिया शोभित भये शुभ सिंहासन शुचि बन्यो॥ २॥

प्रथम तिलक गुरु उच्चरयो विप्र न आयसु दीन। देव सुनिन जय उच्चरी दुन्दुभि हने नवीन। दुन्दुभिहने नवीन सबहि बर अस्तुति ठानी। मातन आरति साजि गीत गावहि मृदुबानी॥ मृदुबानी सुर सुनि सबै जयति राम जय जय करयो। बन्दि वेद बिरदावली प्रथम तिलक गुरु उच्चरयो॥ ३॥

कहि बशिष्ठ प्रथमै वचन सब प्रकार सामर्थ। सुर पाले खलदल दले द्विज महि सज्जन अर्थ॥ द्विज महि सज्जन अर्थ भये दशरथके वारे। निगम सेतु प्रतिपालि सुयश जगमहँ विस्तारे॥ विस्तारे अद्भुत चरित पालय लय कृत पुनि अरन-जय जय नर अवधेशसुत कह बशिष्ठ प्रथमै वचन॥ ४॥

कहि विधि सबहि सुनायकै रामचरित्र अपार। निगम शेष शङ्कर सकल को जग जाननहार॥ को जग जाननहार अमित अवतार विहारी। सुर सज्जनके हेत करत लीला बपुधारी॥ लीला तन मङ्गलभवन खल दलि भुवन बसायकै। जगमङ्गलकारणकरण कह बिधि सबहि सुनायकै॥ ५॥

उठि शङ्कर जय जय कहत राम स्वरूप तुम्हार। मङ्गल-मय मूरति मधुर सुमिरत सब दातार॥ सुमिरत सब दातार लहत सुख सुन्दर ध्याये। गुणगण पावन गाय तरत भव-निधि सुख पाये। सुख पाये मुनिगण मनहिं ज्ञान ध्यान सो ज्यहि चहत। रविकुलकमलदिनेश प्रभु उठि शङ्कर जय जय कहत॥ ६॥

सुरपति कहत प्रणाम करि सुनहु राम सुरभूप। प्रति अवतार अपार गुण बर्णत वेद अनूप॥ बर्णत वेद अनूप दुष्टजन खण्डनहारे। मन मीनको तुसित राम तुमताहि पियारे॥ ताहि पियारे तुम लगत बचे मोह

मद नामकै। इम निशिदिन विषयाविवश सुरपति कहत प्रणामकै ॥ ७ ॥

रविअञ्जलि जोरे कहत राम सुनहु मम बैन। कृपा करिय निज चरण रति निशि दिन राजिवनैन॥ दीजिय राजिवनयन तोष बड़ हृदय हमारे। जबते मम कुल जन्म रावरे नरतन धारे॥ नरतन धरि यश विस्तर्यो चिरञ्जीव जोरी रहत। जय जय रविकुलरविविमल रविअञ्जलि जोरे कहत॥ ८॥

अनिल अनल धर विनय करि खलखण्डन तुम राम। राज आज त्रयपुर विशद राजहि जग अभिराम॥ राजहि जग अभिराम सब्ब सज्जन सुखकारी। नरतन धनु धरि हाथ हर्यो धरणी अघभारी॥ धरणीमण्डन खण्डि खल राज विराजत भुवन भरि। जय जय श्रीसीतारमन अनिल अनल धर विनय करि ॥ ९ ॥

निगम विग्रतन करि कहत राम सुनहु सुरईश। कोटि कोटि यतन करत नहिं पावत योगीश॥ नहिं पावत योगीश हृदय शङ्कर पचिहारे। विधि सनकादिक नेम धर्म करि तुम्हें निहारे॥ तुम्हें निहारत सुख लहें ते कपि भालुहि कर गहें। जयति राम-लीला अगम निगम विग्रतन करि कहें ॥ १० ॥

शारद नारद जोरि कर विनय करत चित लाय। अद्भुत चरित तुम्हार प्रभु सुनिये श्रीरघुराय॥ सुनिये श्रीरघुराय पिता दशरथ सम नाहीं। तृण सम तन तजि दीन सुयश जाको जगमाहीं॥ सुयश कियो जेहि जन्म भरि गयो विरह ल अमरघर। गीधक्रिया निजकर कहैं शारद नारद जोरि कर ॥ ११ ॥

अस्तुति करि मुनि सुर गये राम भरत बुलवाय। कपि-पति ऋच्छ बिभीषणै नल नीलहि अन्हवाय॥ नल नीलहि अन्हवाय भरत भूषण पहिराये। अङ्गद सहित समाज राम सब निकट बुलाये॥ राम निकट बैठारिके मधुर वचन बोलत भये। कपिकीरति प्रभु उच्चरत अस्तुति करि मुनि सुर गये॥ १२॥

मुनिनायक ये नील नल कीन्हे अद्भुत कर्म। शत योजन सागर बँध्यो सेतु उपल शुद्ध धर्म॥ सेतु उपल शुद्ध धर्म शीश रावणके फारे। मन्दिर सुवरण छत्र कलश महिधर बहु डारे॥ महिधर डारि सँघारि अरि रण मण्डल हति असुरदल। महा-वीर बानर बल मुनि नायक ये नील नल॥ १३॥

मुनिनायक कपिराज ये करे हमारे काज। बानर कोटि पठाइयो सिय शोधन शिरताज॥ सिय शोधन शिरताज करयो रणमण्डल भारी। मन्त्र तन्त्र सब सुदृढ़ सैन बल अबल विचारी॥ अबल बिचारी ठौर जहँ तहँ बल दिये समाज ये। महाबली बुधिवन्त अति मुनिनायक कपि-राज ये॥ १४॥

सुनहु बिभीषण बहु कियो मिल्यो मोहिं तजि भाय। रावण अरु घननादको दई सोचु दर्शाय॥ दई सोचु दर्शाय गदा पुनि रावण मारयो। लछमण घायल भये वैद्यको नाम उचारयो॥ नाम उचारयो शत् दल करि उपाय लछमण जियो। राम कहत मुनिराजसों सुनहु बिभीषण बहु कियो॥ १५॥

ऋच्छनाथ बल दल महा रावण हत्यो पचारि। मेघनादको पाँउ धरि लङ्क गयो फटकारि॥ लङ्क गयो फटकारि असुर दल दले समाजन। सेतु बाँधि धरि यूथ हाथ शिर धरि गिरि राजन॥ शिर धरि गिरि रावण दले समय शत्रु रण

नहिं रहा। मुनिनायक लायक सबै ऋच्छनाथ बल दल महा॥ १६॥

ये अङ्गद मुनि अतिबली जिन रावणपुर जाय। मान ज्ञान अरिदल दल्यो रोपि सभा धरि पाँय॥ रोपि सभा धरि पाँय केश धरि रावण रानी। महि कठोरि पुनि हत्यो वीश दश चरण डरानी॥ चरण धरे कम्पत असुर सैन समर अति दलमली। रणविजयी शुभ सुयशदा ये अङ्गद मुनि अतिबली॥ १७॥

ये हनुमन्त बिचारि मुनि प्रथम मिलाये मोहि। कपिपति पुनि दल जोरिकै लै मुद्रिक कर जोहि॥ लै मुद्रिक कर जोहि वीर लै सुभट सिधायो। तृषित लगे मब मरण जाय तेहि सुजल पिआयो॥ सुजल पिआयो सबहिको समुद-तीर रचि मन्त्र पुनि। पच तच्च सम्पाति दै ये हनुमन्त विचारि मुनि॥ १८॥

गयो उदधि पारै सुभट साखी तट बैठाय। देखि सीय सखि हाथ लै बन उजारि फल खाय॥ बन उजारि फल खाय असुर मारि भट भारी। करि उपाय पुर लङ्क कूदि घर घर पुर जारी॥ जारि बारि पुनि वारिनिधि कूदि चल्यो व्यंकट बिकट। गर्जत घोर कठोर अति गयो उदधि पारै सुभट॥ १९॥

सिय सखि दृढ दल लै चल्यो दिग्गज दरकत अङ्ग। पार जाय घेरयो अरिहि दुर्ग कियो पुर भङ्ग॥ दुर्ग कियो पुर भङ्ग समर लच्छण दुख पायो। द्रोणागिरि धरि शीश रयन नभ-मारग धायो॥ मारग धावत शर लग्यो भरत कोपि उर थल दल्यो। लषण शोच उरमानिकै सिय हित गिरि धरि लै चलयो॥ २०॥

कहँ लौं गुण सुनिबैं कहौं कपि समाजके काज। भरत लषणते प्रिय सदा कपिनायक शिरताज॥ कपिनायक शिरताज मिले उठि सबहि बहोरी। बिदा किये सन्मानि परस्पर प्रीति न थोरी॥ प्रीति न थोरी प्रभु करी सब प्रणाम करि सुख लहौं। बार बार यश प्रभु कहैं कहँलौं गुण सुनिबैं कहौं॥ २१॥

राम राज राजत भयो गयो सकल दुख भागि। रोग शोक अपगति मरण काल कर्म गुण त्यागि॥ काल कर्म गुण त्यागि भई सतयुगकी करणी। बारि दमन गति बारि भई सुरभी सुर धरणी॥ सुरभी सुर धरणी भई कपट दम्भ पाखँड गयो। धर्म बिबेक बिचार नर राम राज राजत भयो॥ २२॥

काम क्रोध अघ रोग सब मान मोह मद गर्व। दोष दुःख ज्वर पीर खल दारिददाहन सर्व॥ दारिददाहन सर्व बैर परधन परनारी। गे सुभाय सब छूटि गई मति परअपकारी॥ परउपकारी लोग सुख भोग योग महि प्रकट अब। गये अमङ्गल कृत जगत काम क्रोध अघ रोग सब॥ २३॥

नेम प्रेम प्रकटे जगत दया क्षमा सन्तोष। योग यज्ञ जप तप सुपथ वेद सुमङ्गल पोष॥ वेद सुमङ्गल पोष रहो परमारथ पूरी। पर अघ निज कृत दुःकृत कुकृत दुस्तर भय दूरी॥ दुस्तर भय दूरी करै राम तेज रबि जगमगत। कमल कोक सब धर्म बर नेम प्रेम प्रकटे जगत॥ २४॥

एक राम गुण गायबो यह कलिकर्म न और। तातें तुलसीदासके मन्त्र यहै शिरमौर॥ मन्त्र यहै शिरमौर राम शुचि कीरति गाऊँ। साधन उत्तम जानि सुमति निज मनहि दृढ़ाऊँ॥ मनहि दृढ़ाऊँ मन्त्र यह जिहि प्रसाद

सुख पायबो। शुक नारदकी सीख यह एक रामगुण गायबो॥ २५॥

एक राम सुख नाम द्रत ध्यान रामको रूप। राम चरित्र गावत परम धर्म पवित्र अनूप॥ धर्म पवित्र अनूप करिय जब लौं जग जीजै। रसना रस करि चरित सरित निशि वासर पीजै॥ निशि वासर श्रम तजि भजे तुलसिदास यह शुभ सुकृत। कामधेनु कलि कल्पतरु एक राम सुख नाम द्रत॥ २६॥

इति श्री उत्तरकाण्ड समाप्तम॥

अथ रामायण छन्दावली ॥

दशकन्धर घटकर्ण अघ भारधरा दुख होइ। गई गगन गोदेह धरि कहि सुरपतिसों रोइ १॥ छन्दचौपय्या॥ सुरपतिगुरु बूझा सुरमति सूझा गे विधिलोक तुरन्ता। विधि सुर समुझाये सङ्ग सिधाये जहँ सोवत श्रीकन्ता॥ दशमुखकी करणी बहुविधि वरणी धरणी जेहि विधि रोई। सुनि शारँगपाणी भइ नभवाणी विधि जाना नहिं कोई॥ विधि वचन सुनाये सुर समुझाये तजहु शोच मन देवा। जो जनहितकारी प्रभु असुरारी करहिं पार सोइ खेवा॥ वानर गोपूछा मन धरि रीछा बसहु जाय वनमाहीं। अवधेशनिकेता व्यूहसमेता प्रभु आवत तुमपाहीं २॥ दोहा॥ यहि विधि विबुध विबोधि गे गे सुर निज निज धाम। कछु काल वीते अवध प्रकट भये श्रीराम ३॥ शशिवदनछन्द॥ जनहितकारी प्रकट सुरारी। नरतनधारी छविसुखकारी॥ मृदुभुवकारी अरिदलहारी। सुमुख निहारी बलि महतारी॥ अवधविहारी भवभयहारी। जयतपुरारी सबअघहारी॥ अवधउधारी यह अघभारी। तुलसिहि तारी शरण सम्हारी ४॥ हरिगीतिकाछन्द॥ सम्हारि शरण बिचारि तुलसी रामयश गावत लियो। भयतापशमन कलेशहरको और नहिं जग मग वियो॥ जेहि गाइ यमन किरातखल हरिपुर गये करि सुधि हियो। रघुवीरयश सुनि हिय न हरष्यो बुरो तिन अपनो कियो ५॥ सुन्दरीछन्द॥ राजत सेचक अङ्ग महाछवि। बोल मनोहर कहहिं महाकवि॥ जो सुनिकै

जरि जाय महामल। सादर गावहिं पावहिं सम्बल॥ तूण कसे कटि चाप धिलीमुख। मातु बिलोकि अपार लहै सुख॥ बालचरित्र करै रघुनन्दन। लोग निहारि हरै दुखबन्दन॥ ग्यारह वर्षके राम भये जब। बोलि वशिष्ठ उपनयन दये तब॥ आइ तपोधन याचि लये सुत। बोलि वशिष्ठहि राउ दये युत॥ ताड़क तारि सुरारि दई गति। बालबिनोदक देव किये मति॥ रामहिं मन्त्र दये तब श्रीमति। राम लषण सुनि काज किये अति॥ मारि सुबाहु करी मखकी जब। देत मुनीश अशीश महा तब॥ गौतमतापसतीय तरी मग। राम धरे मिथिलापुरको पग॥ आइ विलोकि विदेह महाछवि। देखि नरेश समाज गयो दवि॥ आयसु दीन्ह विदेह नरेशनु। चाप चाढ़ वत पूज महेशनु॥ डिगै न खण्डेउ राम प्रयासनु। सूमके बीजसमान शरासनु॥ मेलि सिया जयमाल मनोहर। बाजि बधाव धरा अरु अम्बर॥ व्याहि चले न्टप चारि सहोदर। मारग बीच मिले फरसाधर॥ चापहि सौंपि भये तपसीवर। राउ विवाहि आइ अपने धर॥ बालचरित्र विवाह यथामति। जो सुनिकै नरनारि लहै गति ६॥ दोहा॥ चरित चारु रघुवीरके सुनि मन कीन्ह विचार। निज मनसों तुलसी कहै कस न होइ भव पार ७॥

इति श्रीबालकाण्डसमाप्तम्॥

चामरछन्द॥ आय कौशलेशने सुहाय आरसी गही। कानने समीप केश लेखि श्वेत है सही॥ रायकानमें मनोजराय आइ यों कही। राज देव रामको बने सिधाव तो सही॥

कैकयी सुनो सुवात शोकमाल ते गहो। राज माँग पूतको श्रीरामको वने कहो॥ राइनते सुनो सो बात तात ताप यों तये। रामसीय सङ्गलै सवन्धु काननै गये॥ रायरामचन्द्र साथ प्राण काढ़िकै दये। गङ्गपाग होइकै सुचित्रकूटमें गये॥ राजकाजकै भरत्य शोकसिन्धु में भले। साथ लै वशिष्ठ वन्धु पांयप्याद ही चले॥ केवटै सवन्धु भेंटि राम पाग जाइकै। राम दीन पावरी हिये सुलीन लाइकै १॥ दोहा॥ राम पावरी पाइकै गवन गेहको कीन। गणक बोलि तब भरथने नेमधरमब्रत लीन २॥

इति श्रीअयोध्याकाण्डसमाप्तम्॥

सुन्दरीछन्द॥ विदेहजातको कहै सुरेशतातने छुवो। श्रीरामवाण लागतै विहीननैन सो हुवो॥ श्रीदेवदत्त तातको श्रीराम बन्दना कियो। तिन्होंकि तीय सीयको सचैलभूषणो दियो॥ विराध वद्धि रामचन्द्र शारभङ्गके गयो। तहां सुरेश देखिकै सवन्धु सुःखसो भयो॥ वहोरि श्रीसवन्धुसङ्ग पञ्चवाटिका गये। तहांनखानकाननाक सूपनेखको हये॥ त्रिकुश आदितै सुरारि एक वाणसों हये। सुनो सो बात रावणा मरीचपास सो गये॥ कहो कथा सुनी तिनो सो नेकुरङ्ग सो भयो। लखो श्रीराम मारि ताहि धाम आपनो दयो॥ सुन्यो सो शब्द सीय शेष राम पास पाठयो कस्यो विरूप रावणा लै सीय जातयो भयो॥ सवन्धुशाल देखिकै कृपाल दुःखमें पगे। तहां ललामशालतेः तिन्होंतो वूझते लगे॥ कहो सुसुद्धि गीधने कवन्धवन्धके चले। करी सनाथ शेवरी सवन्धु वेरलै भले॥ वहोरि पम्पताल श्रीकृपालराम जायकै। तहां

सुनीथनारद कियो प्रणाम आइके १ ॥ दोहा ॥ लखि सुकण्ठ श्रीरामकहँ मनमहँ कीन्ह विचार। पुरुषसिंह ये कवन हैं देखहु पवनकुमार २ ॥

इति श्रीआरण्यकाण्डसमाप्तम ॥

पञ्चरीछन्द ॥ रामरामको लेवाइके तब शैल ऊपर जाइके। जात वेदहि बीच दै करि कीन्ह प्रीति दृढ़ाइके। क्यों रहो तुम शैलऊपर राम बूझ कपीशसों ॥ त्यों कह्यो व्योहार सगरो वालिको डर रामसों ॥ बालिको वधि बाणसों कपिनाथ तोहिं करौं सही। जानकी तुमको मिलावों विहँसिके कपिने कही ॥ बालि मारि कृपालराम सुराज दीन्ह सुकण्ठको। मास चारि सुवासके तहँ शासना करि कण्ठको ॥ जानकी सुधि लेनको कपिईश कीश पठाइके। मासमें सुधि वेगि ल्यावहु खोजि देखहु जाइके १ ॥ दोहा ॥ कीन्ह्यो विवर प्रवेश तिन अशन कियो फलफूल। पूँछि तियहि मूंदे नयन ठाढ़े जलनिधिकूल २ ॥

इति श्रीकिष्किन्धाकाण्डसमाप्तम् ॥

तोटकछन्द ॥ हनुमान गयो तरि सागरको। उलह्यो जनु खोइ अजाखुरको ॥ गिरि ऊपरपै चढ़ि लङ्क लखी। हनि लङ्किनिको विधिबात भखी ॥ लघुरूप धर्‌यो हनुमान बली। निशि लङ्क बिलोकि नाइ भली ॥ रघुबीर प्रिया कितहूं न मिली। तहँ देखि विभीषणश्रेरि छली ॥ रघुबीर सुआजुहि चित्त कर्‌यो। लखिके हुलसान हियो सुभर्‌यो ॥ तेहिको

मिलि सुद्धि लई सगरी। हरषे हरिको मिलि ज्यों नगरी॥ तहँ जाय लखो रघुवीरप्रिया। कृश अङ्ग मलो सुखहीन सिया॥ पुनि रावण आनि कलेश कियो। सुनि क्रोध भयो हनुमान हियो॥ मुँदरी दइ डारि निहारि प्रिया। सुखदुःख भयो हनुमन्त हिया॥ रघुवीरको दूत प्रसन्नकिया। फलखानको आयसु मांगि लिया॥ लखि बाग लग्यो फल खान हनू। उतपात महा अतिबाग वनू॥ मनुजादनि जाय पुकार करी। हनुमान हनी सेना सगरी॥ घननाद गह्यो पवनातमजा। दशकन्ध सभामहँ जाइ गजा॥ चलिगो रिपु ज्यों न डरो मनमें। मद-मत्त गयन्दनके घनमें॥ घनतेल लँगूर लपेट सही। जवसो निजपेकरि लङ्क दही॥ हनुमानके हांकते गर्भ गिरो। मनुजाद त्रिया नहिं धीर धरो॥ सियआयसु लेकरि सिन्धु तरो। हनुमान सदेह कह्यो सिगरो॥ सुनिके हियसिन्धु अनन्द भरो सजि सेन समूह पयान करो॥ बल देखि पयोनिधि पांय-परो। नल देखिके सेतु समुद्र तरो॥ सुनि मयतनया पिय-पांय परी। प्रभु व्यापकविश्व विराटहरी॥ तब जाय सभाह विचार करी। तपसीन धरो हमरी नगरी॥ तिन मन्त्रिन मन्त्र कुमन्त्र कियो। लघु बन्धुहि मारिसि लात हियो॥ रघुवीरके तीर गयो भजिके। नृपको अविवेक कह्यो सजिके॥ प्रभु लङ्क हि अङ्गदको पठयो। पद रोपि सभागण जाइ ठयो॥ दशकन्ध सभा महँ बीरबचा। नटरो पदज्यों महिसङ्ग रचा॥ बरबीर सभा सद मारि फिरो। रघुवीर पदाम्बुज पाइ परो २॥ दोहा

सुनि कृपालु अङ्गदबचन बूझे मन्त्रीयूह। अनी चारि करि द्वारचहुँ लागे कीशसमूह २॥

इति श्रीसुन्दरकाण्ड समाप्त॥

भुजङ्गप्रयातछन्द॥ लगो सेन सम्हूह चाह्यो दुआरे। भयो घोर देवारि नादे पुकारे॥ तबै वीर बांके दशानन बुलाये। सबै जाय खाहु रीछ वानर जो आये॥ महारोष-मातेहि देवारि गाजे। महामत्त मातङ्गराजो विराजे। बनो बाङ्को व्यूहके बाजि साजे। ध्वजा बाण नीशान घनघोर गाजे॥ करै युद्ध नानादि योधा प्रचारै। लरै वीर कपि भालु चारयो दुआरे॥ फिरैं रुण्ड वेमुण्ड जै जै पुकारै। तहां राम सौमित्र रणमध्य मारैं॥ तबै वीर रणधीरवन्धू जगाये। कही जो कथा सोय जेहि भांति लाये॥ लरयो जाइ रघुवीर जो युद्ध मद्धे। गयो त्यागि तन जाइ योगी न लद्धे॥ सुनो रैनिचर ईसने वन्धु मारयो। तबै तातसों वीद्ध घननाद कारयो॥ लख्यो प्रान पौरुष पिता जो हमारयो। करयो क्रोध शक्रारि सेना बिडारयो॥ तबै ताहि स्वत्थेश गहिकै प्रभायो। गयो मूर्छिकै तुरत लङ्का पठायो॥ हत्यो ताहि सौमित्रना युद्ध मध्ये। करै देव जै जै सआनन्द वध्ये॥ सुन्यो तीयनै पीयको वीर सांचो। भई सो सती सत्य तिहुँलोक मांचो॥ सुन्यो तातको बद्ध दशकन्ध सोचा। अरै बाण नहिं हाय भै पूत पोचा॥ हनों आजु रणमध्य रामै प्रचारी। कहा बापुरो बानरा वीर चारी॥ चले साजि सेना सबै वीर गाजैं। करैं राग मारू पणव-भेरि बाजैं॥ तबै रामके सामुहे रथ जो आयो। दिये दृष्टि श्रीराम सौमित्र लायो॥ तबै राम शरको सकटि खैंचि बाँध्यो। लियो चाप कर साधि वर ताहि साध्यो॥ छुटे बाण दशशीशके शीश छीने। लसै शीश अतिशय भये ते नवीने॥ तबै राम लङ्केशको मन्त्र बूझो। हमारे भरोसो न दशकन्ध जूझो॥ सुनो नाथ यहि ईशको शीश दीन्हे। महो होहि भोगै जिन्हैं पुण्य कीन्हे॥ दिये

मध्य पाके सुधा शोष पोषे। छुटे बाण यक्तीस हियमें सो शोषे॥ मरे नाथ दशग्रीव सुर साधु तोषे। हत्यो भूमि रघुवीर लङ्केश बीजे॥ बजे दुन्दुभी व्योमचर साधु गावैं। नचैं सुर वधू वृष्टि सुमनोंकि लावैं॥ दियो तासुके बन्धुको राम टीका। तिसै हेतु कपि भालु ल्यायो ससीका॥ तवै राम श्रीजानकी बोलि लीन्हो। धरे देह द्विजको अनल लागि दीन्हो॥ लिये सङ्ग कपि भालु सीता समेता। चले राम चढ़ि यान उत्तर निकेता॥ चल्यो यान उत्ताल तिरथै सो आयो। तहां राम हनुमान अवधै पठायो॥ दोहा॥ सीक भाल सिय सङ्गले तिरबेणी को न्हाय। भरद्वाजको बन्दि प्रभु केवट भेंट्यो आय॥

इति लङ्काकाण्ड समाप्तम्॥

छन्द॥ शुभ सगुण अवध जनाइ तेहि क्षण होत सुद सङ्गल महा। शीतल सुगन्ध सुमन्द मारुत अमल जल सुरसरि वहा॥ शुभ अङ्ग फरकत भरतके हिय हुलसि अहि आनँद लहा। तेहि समय श्रीहनुमान प्रभुको आइ सन्देशो कहा॥ मन हरष भरत सुनाइ गुरुकहँ मातु सकल बुलाइकै। कहि खबरि श्रीरघुवीरकी तिन सजे सङ्गल जाइकै॥ गुरु बन्धु संयुत चले प्रभुपर निरखि पदपङ्कज गहे। धरि भरत भुज उर ल्याइ प्रभु राजीवलो चन जल बहे॥ पुनि प्रेमयुत सब मातु भेटीं निरखि प्रभु हुलस्यो हियो। तिन कनक मणिगण वसन भूषण आनि महिदेवन दियो॥ शुभ समय जानि वशिष्ठ वेगि लिवाइ लियो सुमन्तको। सब राजसाज सम्हारि तेहि क्षण राज दियं भगवन्तको॥ सिय सहित रघुकुलमणि बिराजत सुभग सिंहासन परैं। सुर सुमन बरषहिं

हिये हरषहिं ब्रह्मादि सब जै जै करैं॥ गहि छत्र चामर व्यजन असि धनु बीर तरकसके लये। भरतादि अनुज बिभीषणाङ्गद हनुमान चित चरणन दये॥ सुनु सिया श्रीरघुबीरको अबिबेक सुनि उरमें धरे। कह दास तुलसी जन्मसुख लहि जलधि जग बिन श्रम तरे॥ दोहा॥ नित नव मङ्गल अवधपुर करहिं सकल नरनारि॥ लहहिं चारिफल अछत तनु रघुबररूप निहारि॥ छन्द॥ नित प्रीति सरित अन्हाइ बन्धुन सहित प्रभु भोजन करैं। गज बाजि राजसमाज लखि सब देखि बन उपबन फिरैं॥ बैठे सभामहँ जाइ श्रीरघुबीर दुख सबके हरे। हरिन्याव ष्वान उलूकको लखि लोग सब बिस्मय करे। माण्डवी श्रुतिकिरति उरमिलासो सबनि सुत द्वै द्वै जने। जानकी सुत युगल जाये सब निगम आनँद घने॥ सनकादि नारद आदि मुनिवर सकल अवधहि आवहीं। लखि जाहिं रघुबरके चरित सब बिधिहि जाय सुनावहीं। यक बारको महिदेवको सुत सभामहँ आयो मरयो। गुरु बूझि तपसे मारि शूद्रहि तबहिंसे उठि जियपरयो॥ यहि भाँति रामचरित्र परमपवित्र नित नूतन करैं। कहि दासतुलसी सुनत सबके बचन मन पातक टरे ३॥ दोहा॥ सुनि सीताके युगल सुत राम कीन्ह अनुमान॥ लोक सिखावन कीन्ह हित बोले श्रीभगवान ४॥

इति श्रीउत्तरकाण्ड समाप्तम्॥

तुलसी सतसई ॥



नमो नमो श्रीराम प्रभु परमातम परधाम। जेहि सुमिरत सिध होत हैं तुलसी जन मन काम॥ राम बाम दिसि जानकी लषण दाहिनी ओर॥ ध्यान सकल कल्याणकर तुलसी सुरतरु तोर॥ परमपुरुष परधाम वर जापर अपर न आन। तुलसी सो समुझत सुनत राम सोई निर्वान॥ सकल सुखद गुण जासु सो राम कामनाहीन। सकल काम-प्रद सर्वहित तुलसी कहहिं प्रवीन॥ जाके रोमरोम प्रति अमित अमित ब्रह्मण्ड। सो देखत तुलसी प्रकट अमल सु-अखण्ड प्रचण्ड॥ जगतजननि श्रीजानकी जनक राम शुभ रूप। जासु कृपा अति अघहरनि करनि विवेक अनूप॥ तात मातुपर जासुके तासु न लेश कलेश। ते तुलसी तजि जात किमि तजि घर तर परदेश॥ पिता विवेकनिधान वर मातु कृपा युत नेह। तासु सुवन किमि पाइ है भ्रमत अटन तजि गेह॥ बुद्धि विनय गतिहीन शिशु सुपथ कुपथ गत जान। जननि जनक तेहि किमि तजे तुलसी सरिस अजान॥ मात तात सियरामपद बुधि विवेक परमान। हरत अखिल अघ सकल तर तब तुलसी कछु जान॥ जिन्हते उद्भव वर त्रिभव ब्रह्मादिक संसार। सुगति तासु तिनकी कृपा तुलसी बदहि विचार॥ शशि रवि सीताराम नभ तुलसी उरसि प्रकाश॥ उदित सदा अथवत न सो कुबलित तमकर हान॥ तुलसी कहत विचार गुरु राम सरिस नहिं आन। जासु कृपा शुचि होति रुचि विशद विवेक प्रमान॥ रामस्वरूप अनूप अज

हरत सकल मलमूल। तुलसी मर्म हियो गलहि उपजत सुख अनुकूल॥ रेफरमित परमातमा सह अकार सिय रूप। दीरघ भिलि बिधि जीवद्रव तुलसी अमल अनूप॥ अनुस्वार कारण जगत ओंकार करन अकार॥ मिलत अकार मकारसों तुलसी हरि दातार॥ ज्ञान विरागै भक्ति सह मूरति तुलसी पेषि। वरणत गति मति अनुहरत महिमा विशद विशेषि॥ नाम मनोहर जानि जिय तुलसी करि परमान॥ वरण विपर्यय भेदते कहो सकल शुभ जान॥ तुलसी शुभ कारण समुझि गहत रामरस नाम। अशुभहरण शुचि शुभकरण भक्ति ज्ञान गुणधाम॥ तुलसी राम समान वर सपनेहु अपर न आन। तासु भजन रतिहीन अति चाहसि गति परमान॥ अहि रसना थन धेनु रस गणपति द्विज गुरुवार। माधव सित सियजनम तिथि सतसैया अवतार॥ भरण हरण अति अमित विधि तत्त्व अर्थ कविरीति। सङ्केतिक सिद्धान्त मत तुलसी वदन विनीति॥ विमल बोध कारण सुमति सतसैया सुखधाम॥ गुरुमुख पढ़ि गति पाइहैं विरति भक्ति अभिराम॥ मन भय जरसत लाग युत प्रकट छन्द युत होइ। सो घटना शुभदा सदा कहत सुकवि सब कोइ॥ जत समान लत गान लघु अपर वेद गुरु मान संयोगादि विकल्प पुनि पद न अन्त कह जान॥ दीरघ लघ करि तहँ पढब जहँ सुख लहि विश्राम। प्राकृत प्रकट प्रभाव इह जनित बुधाबुध बाम॥ दुइ गुरु सोता सारगण रासलोगुरुलघु होइ। लघु गुरु रमा प्रलम्बगन युगलहु हरगण सोइ॥ सहसनाम मुनि भनित सुनि तुलसी बल्लभ नाम। सकुचति यह हँसि निरखि सिय धरमधुरन्धर राम॥ दम्पति रस रसना दसन परिजन वदन सुगेह। तुलसी हर हित वरण शिशु सम्पति सरल सनेह॥ हिय निर्गुण नैनन सगुण रसना राम

सुनाम। मनहुँ पुरट सम्पुट लसत तुलसी ललित ललाम॥ प्रभु गुणगण भूषण वसन वचन विशेष सुदेश। रामसुकीरति कामिनी तुलसी करतब केश॥ रघुबरकी रति लियवदन इव कह तुलसीदास। शरदप्रकाश शशाङ्कछवि चारु चिबुक तिल जास॥ तुलसी शोभत नखतगण शरदसुधाकर साथ। मुक्ता झालर झलक जनु रामसुयश शिशु हाथ॥ आतम सभ्य विवेक बिनु राम भजत अलसात। लोक सहित परलोककी अवश विनाशी बात॥ बक मराल मानस तजे चन्द्र शीत रवि घाम॥ मोर मदादिक जो तजै तुलसी तजै न राम॥ आसन दृढ़ आहार दृढ़ सुमति ज्ञान दृढ़ होय। तुलसी विना उपासना बिनु दुलहेकी जोय॥ रामचरण अवलम्ब बिनु परमारथकी आश। चाहत वारिदबुन्द गहि तुलसी चढ़न अकाश॥ रामनाम तरुमूल रस अष्ट पत्र फल एक। युगल सन्त शुभ चारि जग वरणत निगम अनेक॥ राम कामतरु परिहरत सेवत कलितरु ठूँठ। स्वारथ परमारथ चहत सकल मनोरथ झूँठ॥ तुलसी केवल कामना रामचरित आराम। निशिचर कलि करि निहत तरु मोहि कहत विधि बाम॥ स्वारथ परमारथ सकल सुलभ एकही ओर। द्वार दूसरे दीनता उचित न तुलसी तोर॥ हितसम हित रति रामसन रिपुसन वैर विहाव॥ उदासीन संसारसन तुलसी सहज सुभाव॥ तिलपर राखे सकल जग विदित विलोकत लोग॥ तुलसी महिमा रामकी को जग जानन योग॥ जहाँ राम तहँ काम नहिं जहाँ काम नहिं राम। तुलसी कबहीं होत नहिं रवि रजनी इक ठाम॥ राम दूर माया प्रबल घटति जानि मनमाहिं। बढ़ति भूरि रवि दूर लखि शिरपर पगुतर छाहिं॥ सम्पति सकल जगतकी

आसा सम नहिं होय। आस सोइ लगि रामपद तुलसी आलस न सोय॥ तुलसी जो मति चतुरता रामचरण लव-लीन। पण्डित परमत सबकहँ गनिका परम प्रवीन॥ चतुराई चूल्हे परै यम गहि ज्ञानहि खाय॥ तुलसी प्रेम न रामपद सब जर मूल नसाय॥ प्रेम शरीर प्रपञ्च रुज उपजी बड़ी उपाधि॥ तुलसी भली सो बैदई बेगि बांधई व्याधि॥ राम बिटप तर विमद वर महिमा अगम अपार। जाकहँ जहँलगि पहुँच है ताकहँ तहँलगि डार॥ तुलसी कोशलराज भजु जनि चितवै कहुँ ओर। पूरण राम मयङ्क मुख कर निज नयन चकोर॥ ऊँचे नीचे कहुँ मिलै हरि-पद परम पियूष। तुलसी काम मयूखसे लागे कीनेउ रूप॥ स्वामी होनो सहज है दुर्लभ होनो दास। गाडर लाये ऊनको लागी चरै कपास॥ चलव नीति मग रामपद प्रेम निबाह-व नीक। तुलसी पहिरिय सो बसन जो नय वारत फीक॥ तुलसी रामकृपालुते कहि सुनाव गुण दोष। होइ दूबरी दीनता परम पीन सन्तोष॥ सुमिरन सेवन रामपद राम-चरण पहिचान। ऐसेहुँ लाभ न ललक मन तो तुलसी हित-हान॥ सब सङ्गी बाधक भये साधक भये न कोय। तुलसी राम-कृपालुतें भली होय सो होय॥ तुलसी मिटै न कल्पना गये कल्पतरुछाँह। जबलगि द्रवै न करि कृपा जनकसुताको नाँह॥ विमल विलग सुख निकट दुख जीवन समय सुरीति। रहित राखिये रामको तजेहि उचित सप्रीति॥ जाय कहब करतूति बिनु जाय योग बिन छेम। तुलसी जाय उपाय सब बिना रामपदप्रेम॥ तुलसी रामहिं परिहरे निपट हानि सुनु सोइ। जिमि सुरसरिगत सलिल वर सुरा सरिस गङ्गोद॥ हरे चरहिं तापहिं बरे फरे पसारहिं हाथ।

तुलसी स्वारथ मीत जग परमारथ रघुनाथ। तुलसी खोटे दासकर राखत रघुवर मान। ज्यों मूरखउ परोहितहि देत दान यजमान॥ ज्यों जग बैरी मीनको आपु सहित परिवार। त्यों तुलसी रघुनाथ बिन आपनि दशा विचार॥ तुलसी राम भरोस थिर लिये पाप धरि ओट। ज्यों व्यभिचारी नारिकहँ बड़ी खसमकी ओट॥ स्वामी सीतानाथजी तुमलगि मेरी दौर। तुलसी काग जहाजको सूझत और न ठौर॥ तुलसी सब छल छाँड़िके कीजै राम सनेह। अन्तर पतिसों है कहा जिन देखी सब देह॥ सबही कोप रखै लखै गहु न कहे का होय। तुलसी तेरो राम तजि हित जग और न कोय॥ तुलसी हम-सों रामसों भलो मिलो है सूत। छाँड़े बनै न सँग रहे ज्यों घर-माहँ कपूत॥ कोटि विघ्न सङ्कट विकट कोटि शत्रु जो साथ॥ तुलसी बल नहिं करि सकैं जो सुदृष्ट रघुनाथ॥ लगन मुहूर-त योगबल तुलसी गनत न काहि। राम भये जेहि दाहिने सबै दाहिने ताहि॥ प्रभु प्रभुता जाकहँ दई बोल सहित गहि बांह। तुलसी ते गाजत फिरहिं रामछत्रकी छांह॥ साधन साँसति सब सहत सुमन सुखद फल लाहु॥ तुलसी चातक जलदकी रीझि बूझि बुध काहु। चातक जीवन जलदकहँ जानत जगत सुरीति। लखत लखत लखि परत है तुलसी प्रेम प्रतीति॥ जीव चराचर जहँलगे है सब-को प्रिय मेह। तुलसी चातक मन बसो घनसों सहज सनेह॥ डोलत विपुल विहङ्ग बन पियत पोखरी बारि। सुयश धवल चातक नवल तोर भुवन दशचारि॥ मुख मीठे मानस मलिन कोकिल मोर चकोर। सुयश ललित चातक बलित रह्यो भुवन भरि तोर॥ माँगत डोलत है नहीं तजि घर अनत न जात। तुलसी चातक भक्तकी उपमा देत लजात॥

तुलसी तीनोंलोकमहँ चातक हीको माथ। सुनियत जासु न दीनता किये दूसरे नाथ॥ प्रीति पपीहा पयदकी प्रकट नई पहिचान। याचक जगत अधीन इन किये कनौड़ो दान॥ ऊंचो जान पपीहरा नीचो पियत न नीर। कै याँचै घनश्यामसों कै दुख सहै शरीर॥ कै बरषै घन समय शिर कै भरि जनम निराश। तुलसी चातक याचकहि तऊ तिहारी आश॥ चढ़त न चातक चित कबहुं प्रिय पयोदके दोष। याते प्रेमपयोधि बर तुलसी योग न दोष॥ तुलसी चातक माँगनो एक एक घन यानि॥ देत सो भूभाजन भरत लेत घूंट भरि पानि॥ है अधीन याचत नहीं शीश नाय नहिं लेय। ऐसे मानी माँगनहि को वारिद बिन देय॥ पवि पाहन दामिनि गरज अति झकोर खर खीझि। दोष न प्रीतमरोष लखि तुलसी रागहि रीझि॥ कोन जियाये जगतमहँ जीवनदायक पानि। भयो कनौड़ो चातकहि पयद प्रेम पहिचानि। मान राखिबो माँगिबो पियसों सहज सनेह। तुलसी तीनों तब फबैं जब चातक मन लेह॥ तुलसी चातकही फबै मान राखिबो प्रेम। वक्रबूंद लखि स्वातिको निदरि निबाहत नेम॥ उपल बरषि गरजत तरजि डारत कुलिश कठोर। चितव कि चातक जलद तजि कबहुँ आनकी ओर॥ बरषि परुष पाहन जलद पच्छ करै टुक टूक। तुलसी तदपि न चाहिये चतुर चातकहि चूक॥ रटत रटत रसना लटी तृषा सूखिगो अङ्ग। तुलसी चातकके हिये नित नूतनहि तरङ्ग॥ गङ्गा यमुना सरस्वती सातसिन्धु भरिपूर। तुलसी चातकके मते बिन स्वाती सब धूर॥ तुलसी चातकके मते स्वाती पियत न पानि। प्रेमतृषा बढ़ती भली घटे घटैगी कानि॥ सर सरिता चातक तजै स्वाती सुधि नहिं लेइ।

तुलसी सेवक बश कहा जो साहब नाहिं देइ॥ आश पपीहा पयदकी सुनु हो तुलसीदास। जो अँचवै जल स्वातिको परिहरि बारहमास॥ चातक घन तजि दूसरे नियत न नाई नारि। मरत न माँगे अर्द्ध जल सुरसरिहूको वारि॥ व्याधा बधो पपीहरा परो गङ्ग जल जाय। चोंच मूंदि पीवै नहीं धिग पिय मों प्रण जाय॥ बधिक बधो परि पुण्यजल उपर उठाई चोंच। तुलसी चातक प्रेमपट मरत न लायो खोंच॥ चातक सुतहि सिखाव नित आन नीर जनि लेहु। ये हमरे कुलको धरम एक स्वातिसों नेहु॥ दरशन परशन आन जल बिनु स्वाती सुनु तात। सुनत चेचुवा चित चभो समुझि नीति वर बात॥ तुलसी सुलभे कहत हैं चातक बारम्बार। तात न तरपन कीजियो बिना बारिधरधार॥ बाज चङ्गु गत चातकहि भई प्रेमकी पीर। तुलसी परबश हाड़ मम परिहै पुहुमी नीर॥ अण्ड फोरि किय चेचुवा तुषा परो नीहार। गहि चङ्गुल चातक चतुर डारो बारहि बार॥ होय न चातक पातकी जीवनदानि न मूढ़। तुलसी गति प्रहलादकी समुझि प्रेमपद गूढ़॥ तुलसीके मत चातकहि केवल प्रेम-पियास। पियत स्वातिजल जान जग तावत बारहमास॥ एक भरोसो एक बल एक आश विश्वास। स्वातिसलिल रघुनाथ वर चातक तुलसीदास॥ आलवाल मुक्ताहलनि हिय सनेह तरुमूल। हेल हेल चित चातकहि स्वातिसलिल अनुकूल॥ रामप्रेम बिन दूबरे रामप्रेम सह पीन। विशद सलिल सरवर बरन जन तुलसी मन मीन॥ आप बधिक वर वेष धरि कहै कुरङ्गमराग। तुलसी ज्यों मृगमन मुरै परै प्रेमपट दाग॥

इति प्रेम भक्ति निर्देशः प्रथमः सर्गः १॥

खेलत बालक ब्याल सँग पावक मेलत हाथ। तुलसी सिसु पितु मातु ज्यों राखत सिय रघुनाथ॥ तुलसी केवल रामपद लागै सरल सनेह। तौ घर घट बन बाटमहँ कतहुँ रहै किन देह॥ कै ममता करु रामपद कै समता करु हेल। तुलसी दोनहुँ एक जब खेल छाँड़ि छल खेल॥ कै तोहि लागहि राम प्रिय कै तु राम प्रिय होहि। दुहमहँ उचित सुगम समुझि तुलसी कारज तोहि॥ रावनारिके दास सँग कायर बसहिं कुचाल। खरदूषण मारीच सम मूढ़ भये वध काल॥ तुलसीपति दरबारमहँ कमी वस्तु कछु नाहिं। कर्महीन कलपत फिरत चूक चाकरीनाहिं॥ राम गरीबनिवाज हैं राज देत जन जानि। तुलसी मन परिहरत नहिं घुरविनियाकी बानि॥ घर कीन्हें घर होत है घर छाँड़े घर जाय। तुलसी घर बन बीचही रहो प्रेमपुर छाय॥ राम नाम रटिबो भलो तुलसी खता न खाय। लरिकाईते पैरिबो धोखे बूड़ि न जाय॥ तुलसी बिलम न कीजिये भजि लीजै रघुबीर। तनतरकसते जात है स्वांस सारिखे तीर॥ रामनाम सुमिरत सुयश भाजन भये कुजाति। कुतरु कुसुम सुरराजबन लहत भुवन बिख्याति॥ नाममहातम राखि सुनु नरकी कैतिक बात। सरवरपर शिशिर लरै ज्यों तरवरके पात॥ ज्ञान गरीबी गुण धरम नरम बचन निरमोष। तुलसी कबहुँ न छाँड़िये शील सत्य सन्तोष॥ असन बसन सुत नारि सुख पापिहुके घर होइ। सन्तसमागम रामधन तुलसी दुर्लभ दोइ॥ तुलसी तीरहिके बसे अवशि पाइये थाह। बीचहि थाह न पाइये सर सरिता अवगाह॥ डग अन्तर मग अगम जग जलनिधि जलसञ्चार। तुलसी करिया कर्णधर बूड़त तरत न बार॥ तुलसी हरि अपमानते होत

अकाज समाज। राज करत रज मिलि गयो सदल सकुल कुरुराज॥ तुलसी मीठे वचनते सुख उपजत चहुँ ओर। वशीकरण यक मन्त्र है परिहरु वचन कठोर॥ रामकृपाते होत सुख रामकृपा बिन जात॥ जानत रघुवर भजनते तुलसी शठ अलसात॥ सनमुख ह्वै रघुनाथके देहु सकल जग पीठि। तजे केंचुरी उरगकहँ होत अधिक अति डीठि॥ मरयादा दूरहि रहे तुलसी किये विचार॥ निकट निरादर होत है जिमि सुरसरिवरवार॥ राम कृपानिधि स्वामि मम सब बिधि पूरणकाम। परमारथ परधाम वर सन्त सुखद बलधाम॥ रामहि जानहि राम रट भजु रामहि तजु काम। तुलसी राम अजान नर किमि पावहि परधाम॥ तुलसी पति रति अङ्क सम सकल साधना सून। अङ्क रहित कछु हाथ नहि सहित अङ्क दश गून॥ तुलसी अपने रामकहँ भजन करहु इक अङ्क। आदि अन्त निरबाहिबो जैसे नवको अङ्क॥ दुगुणे तिगुणे चौगुणे पञ्च षष्ठओ सात। आठौते पुनि नव गुणे नवके नव रहि जात॥ नवके नव रहि जात हैं तुलसी किये विचार। एमो राम इमि जगतमें नहीं द्वैत विस्तार॥ तुलसी राम सनेह करु त्यागु सकल उपचारु। जैसे घटत न अङ्क नव नवके लिखत पहारु॥ अङ्क अगुण आखर सगुण समुझिउ उभय प्रकार। पोये राखे आप भल तुलसी चारु विचार॥ यहि विधिते सब राममय समुझहु सुमतिनिधान। याते सकल विरोध तजु भजु सब समुझु न आन॥ राम कामनाहीन पुनि सकलकामकरतार। याहीते परमातमा अव्यय अमल उदार॥ जो कछु चाहत सो करत हरत भरत गत भेद। काहु सुखद काहू दुखद जानत हैं बुध वेद॥ सन्त कमल मधुमास कर तुलसी बरण विचार। जग सरवर तर भरण कर

जानहु जलकोसार॥ एक सृष्टिमहँ जाहि विधि प्रकट तीनि तर भेद। सात्विक राजस तम सहित जानत हैं बुध वेद॥ ताविधि रघुबर नाम कहँ वर्त्तमान गुण तीन। चन्द्र भानु कपि अमल विधि हरि हर कहहिं प्रवीन॥ अनल रकार घकार रवि जासु मकार मयङ्क। हरी अकार रकार विधि मन महेश निःशङ्क॥ बनन ज्ञानकहँ दहन कर अनल प्रचण्ड रकार। हरि अकार हर मोह तम तुलसी कहहिं विचार॥ त्रिविध ताप हर शशि सतर जानहु परम मकार। विधि हरि हर गुण तीनिको तुलसी नाम अधार॥ भानु कृशानु मयङ्कको कारण रघुबर नाम। विधि हरि शम्भु शिरोमणी प्रणत सकल सुखधाम॥ अगुण अनूपम सगुणनिधि तुलसी जानत राम। करता सकल जगत्तको भरता सब मन काम॥ छत्र मुकुट सम बिन्दुकल तुलसी युगल हलन्त। सकल वरण शिरपर रहत महिमा अमल अनन्त॥ रामानुज सदगुण विमल श्याम राम अनुहार। भरता भरत सो जगतको तुलसी लसत अकार॥ राजत राजसतासु जब वर धरणी धर धीर। विधि विहरत अति आशु करि तुलसी जनगण पीर॥ हरण करण सङ्कट सतर समर धीर बलधाम। मा महेश अरिदवनवर लषण अनुज जरि काम॥ राम सदा सम शील घर सुखसागर पर-धाम। अज कारण अद्वैत नित समतर पद अभिराम॥ होन-हार सहजान सब विभव बीच नहिं होत। गगन गिरह करि-वो कवे तुलसी पढ़त कपोत॥ तुलसी होत सिखेन हित तन गुण दूलणधाम। भजण सिखिन कवने कह्यो प्रकट विलोकहु काम॥ गिरत अण्ड सम्पुट अरुण जलज पत्र अनयास। कलतसुवन उपदेश केहि जात सुउलटि अकास॥ त्रिविध त्रित जल पत्र बिच अधिक नून सम सूर। कब कौने तुलसी

रचै केहि विधि पच्छ मयूर॥ काकसुता गृह ना करै यह अचरजु दइवाय। तुलसी कहि उपदेश सुनि जनित पिता घर जाय॥ सुपथ कुपथ कीन्हे जनित स्व स्वभाव अनुसार। तुलसी सिखवत नाहिं शिशु मूषकहन न मजार॥ तुलसी जानत है सकल चेतन मिलत अचेत। कीट जात उड़ि तिय निकट तिनहिं पढ़े रति देत॥ होनहार सब आपुते वृथा सोच कर जौन। कञ्ज सृञ्ज तुलसी मृगन कहहु उमेठत कौन॥ सुख चाहत सुखमें वसत है सुखरूप विशाल। सन्तत जा विधि मानसर कवहुं न तजत मराल॥ नीति प्रीति यश अयश गति सबकहँ शुभ पहिचान। बस्ती हस्ती हस्तिनी देत न पति रति दान॥ तुलसी अपने कुलदते को कहु रहत अजान। कोश कुन्त अङ्कुर वनहिं उपजत करत निदान॥ यथा धरणि सब बीजमें नखत अकाश निवास। तथा राम सब धर्ममय जानत तुलसीदास॥ पुहुमी पानी पावकहु पवनहु माहँ समात। ता कहँ जानत राम अपि विनु गुरु किमि लखि जात॥ अगुण ब्रह्म तुलसी सोई सगुण विलोकत सोइ। दुख सुख नाना भांतिको तेहि विरोधते होइ॥ शूर यथा गण जीति अरि पलटि आव चलि गेह। तिमि गति जानहि रामकी तुलसी सन्त सनेह॥ परमातमपद्द राम पुनि तीजे सन्त सुजान। जे जगमहँ विरचहिं धरे देह विगत अभिमान॥ चौथो संज्ञा जीवकी सदा रहत रत काम। मलवासिलन रामपद निशि वासर बसधाम॥ सुख पाये हरषत हँसत खीभत लहे विषाद। प्रकटत दुरत निरय परत केवल रत विषस्वाद॥ नाना विधिको कल्पना नाना विधिको सोग। सूक्षमओ अस्थूल तन कबहुँ तजत नहिं रोग॥ जैसे कुष्ठीको सदा गलित रहत दोउ देह। विन्दहुको गति ते-

सिये अन्तरहू गति एह॥ लिधा देइ गति एक विधि कबहूँ लागति आन। विविध कष्ट पावत सदा निरखहिं सन्त सुजान॥ रामहिं जाने सन्तवर सन्तहि राम प्रमान। सन्तन केवल राम प्रभु रामहि सन्त न आन॥ ताते सन्त दयाल वर देहि राम धन रीति। तुलसी यह जिय जानिकै करियत हठि अति प्रीति॥ तुलसी सन्त सुअम्बतरु फूलि फरहिं पर-हेतु। इतते वै पाहन हनैं उतते वै फल देतु॥ दुख सुख दोनों एकसम सन्तनके मनमाहिं। मेरु उदधि गति लक्कुर जिमि भार भीजिबो नाहिं॥ तुलसी राम सुजानकी राम जनावै सोइ। रामहिं जानै रामजन आन कबहुँ ना होइ॥ सो गुरु राम सुजासु सम नहीं विषमता लेश। ताकी कृपा कटाक्ष-ते रहे न कठिन कलेश॥ गुरुकहँ तब समझै सुनै निज कर-तबकर भोग। कह तब गुरु कर तब करे मिटै सकल भव-सोग॥ शरणागत तेहि रामके जिन्ह हियधी सियरूप। जा पद पाये पाइये आनँद पद उपदेश। संशय शमन नशाय सब पावै पुनि न कलेश॥ मेधा सीता संम समुझ गुरु विवेक सम राम। तुलसी सिय सम सो सदा भयो विगत मग वाम॥ आदि मध्य अवसान गति तुलसी एक समान। तेई सन्त सरूप शुभ जे अनीत गति आन॥ एई शुद्ध उपासना परा-भक्तिकी रीति। तुलसी यहि मगु पगु धरे रहे रामपद प्रीति॥ तुलसी बिन गुरुदेवके किमि जानै कहु कोय। जहँते जो आयो सो है जाय जहाँ है सोय॥ अपगत ये सोई अवनि सो पुनि प्रकट पताल। कहां जनम अपि मरणमपि समुझहि सुम-तिरसाल॥ सङ्ग दोषतते भेद अस मधु मदिरा मकरन्द। गुरु गमते देखहिं प्रकट पूरण परमानन्द॥ डावर सागर कूपगत भेद दिखाई देत। है एकै दूजे नहीं द्वैत आनके हेत॥ गुण-

गत नाना भांति तेहि प्रकटत कालहि पाय। जान जाय गुरु ज्ञानते बिन जाने अरसाय॥ तुलसी तरु फूलत फलत जा विधि कालहि पाय। तैसेही गुण दोषते प्रकटत समय सुभाय॥ दोषहु गुणकी रीति यह जानु अनल गति देखि। तुलसी जानत सो सदा जेहि विवेक सुविशेखि॥ गुरुते आवत ज्ञान उर नाशत सकल विकार। यथा निलय गति दीपके मिटत सकल अँधियार॥ यद्यपि अवनि अनेक सुख तोय तासु रस ताल। सन्तत तुलसी मानसर तदपि न तजहिं मराल॥ तुलसी तोरत तीर तरु मानस जहँ सविडार। विगत नलिनि अलि मलिन जल सर सरिहू बढ़ि आर॥ जो जल जीवन जगत को परसत पावन जौन। तुलसी सो नीचे ढरत ताहि निवारत कौन॥ जो करता है करम को सो भोगत नहिं आन। ववनहार लुनि है सोई देनो लहै निदान॥ रावण रावणको हन्यो दोष रामकहँ नाहिं। निज हित अनहित देखु किन तुलसी आपहिंमाहिं॥ सुमिरु राम भजु रामपद देखु राम सुनु राम। तुलसी समुझहु रामकहँ अहनिशि इह तव काम॥ रज अप अनल अनिल नभ जड़ जानत सब कोइ। इह चैतन्य सदा समुझ कारजरत दुख होइ॥ निजकृत बिलसत सो सदा बिन पाये उपदेश। गुरुपशु पाय सुमग धरै तुलसी हरै कलेश॥ सलिल शुक्र शोणित समुझ पल अरु अस्थि ससेत। बाल कुमार युवा जरा है सुसमुझ कर चेत॥ ऐसिहि गति अवसानकी तुलसी जानत हेत। ताते यह गति जानि जिय अविरल हरि चित चेत॥ जानै रामस्वरूप जब तब पावै पद सन्त। जन्म मरण पदते रहित सुखमा अमल अनन्त॥ दुखदायक जाने भले सुखदायक भजि राम। अब हमको संसारको सब विधि पूरणकाम॥ आपुहि मदको

पान करि आपुहि होत अचेत। तुलसी बिबिध प्रकारको दुख उतपति यहि हेत ॥ जासों करत बिरोध हठि कहु तुलसी को आन। सोत भमन न ध्यान तव नाहक होसि मलान॥ चाहसि सुख जेहि मारिके सो तो मारि न जाय। कौन लाभ बिषते बदलि ते तुलसी बिष खाय॥ कोह द्रोह अघमूल है जानत को कहु नाहि। दया धर्म्म कारण समुझि को दुख पावत ताहि॥ बनो बनायो है सदा समुझ रहित नहिं झूल। अरुण बरण केहि कामको बास बिनाको फूल॥

इति द्वितीयः सर्ग्गः॥

जनकसुता दशयानसुत उरग ईश अमजोरि। तुलसिदास दशपद परखि भवसागर गयो पौरि॥ तुलसी तेरो रोग खर तात मात गुरुदेव। तात जितोहौं उचित भव रचित आन पद सेव। तर्क विशेषि निषेध पति उर मानसु सुपुनीत। बसत मरालल रहित करि तेहि भजु पलटि विनीत॥ शुक्रादिहि कल देहु इक अन्त सहित सुखधाम। दे कमला कल अन्तको मध्य सकल सुखदाम॥ बीज धनञ्जय रवि सहित तुलसी तथा मयङ्क। प्रकट तहां नहिं तम तमो समचित रहत अभङ्क॥ रञ्जन कानन कोकनद बंश बिमल अवतंस। गञ्जन पुरहुत अरि सकल जगहित मानस हंस॥ जगते रहु छत्तीस है रामचरण छत्तीन। तुलसी देखु बिचारि हिय है यह मतो प्रवीन॥ क्रन्दिन दून नखल हनि गनी अनुज तेहि कीन्ह। जेहि हरि कर मनि मान हनि तुलसी तेहि पद लीन्ह॥ शिला आयु मोचक वरण हरण सकल जञ्जाल। भरण करण सुख सिद्धितर तुलसी परम कृपाल॥ सरण बिपति हर धर धरम धराधरण बलधाम। सरण तासु तुलसी चहत बरण अखिल अभिराम॥ बिक्रम

बीच रैयत बिलय पति पति तुलसी लोर। तासु बिमुख सुख घति बिजस सपनेहु होत न खोर॥ द्वितिय कोल राजिव प्रथम बाहु न निश्चय साहि। आदि एक कल दे भजहु वेद विदित गुण नाहि॥ बसत जहाँ राघव जलज तेहि छिति गोनहि सङ्ग। भजु तुलसी तेहि अरि सुपङ्क करि उर प्रेम अभङ्ग॥ भजहु तरणिअरि आदिकहँ तुलसी आत्मज अन्त पञ्चानन लहि पदम सथि गहे बिमल मन सन्त॥ बनिता शैल सुतासको तासु जनमको ठाम। तेहि भजु तुलसीदास हित प्रणत सकल सुखधाम॥ भजु पतङ्गसुत आदिकहँ मृत्युञ्जय अरि अन्तु। तुलसी पुहकर यज्ञकर वरण पाँसु-पिच्छन्तु॥ उलटे लासो तासु पलि सौ हजार मन सत्य॥ द्वितिय तृतिय हर कास नहिं भजु तेहि तुलसीदास। काका-सन आसन किये सासन लहे उपास॥ आदि द्वितिय अव-तारकहँ भजु तुलसी नृप अन्त। कमल प्रथम अरु मध्य सह वेद विदित मत सन्त॥ जेहि न गन्यो कछु मानसहु सुरपति अरि मो आस। तेहि पद शुचिता अवधि भव तेहि भजु तुलसीदास॥ नैनकरण गुणधरण वर तावर वरण विचार। चरण सलर तुलसी चहसि उवरन शरणअधार॥ भजु हरि आदिहि बाटिका भरिता राजिव अन्त। करिता पद विश्वास भव सरिता तरसि तुरन्त॥ जड़ मोहन वरणादि-कहँ सह चञ्चल चित चेत। भजु तुलसी संसार अहि नहि गहि करत अचेत॥ मरण अधिप वारण वरण दूसर अन्त अगार। तुलसी दृषु सह रागधर तारण लरण अधार॥ ज्यों उरविज चाहसि छटित तो करि घटित उपाय। सुमन सवर वर अरि-चरण सेवन सरल सुभाय॥ द्वितिय पयोधर परमधन बाग अन्त युत सोय। भजु तुलसी संसार हित याते अधिक न

कोय॥ पति पयोधि पावत पवन तुलसी करहु विचार। आदि द्वितिय अरु अन्तयुत नामत तव निरधार॥ हंस कपट रस सहित गुण अन्त आदि प्रथमन्त। भजु तुलसी तजि वामगति जेहि पद रत भगवन्त॥ कना समुझि कवरण हरहु अन्त आदि युत तार। ओंकर तमहर वरण वर तुलसी सरत उबार॥ अङ्कदशारस आदि युत पाण्डुसूनु सह अन्त। जानि सुवन सेवक सतर करि है कृपा परन्त॥ झटिति सखाहि विचारि हिय आदि वरण हर एक। अन्त प्रथम स्वर दे भजहु जा उर तत्त्व विवेक॥ आदि चन्द्र चञ्चल सहित भजु तुलसी तजु काम। अघगञ्जन रञ्जनसुजन भवभञ्जन सुखधाम॥ विगति देह तनु जासु पति पद रति सहित सनेह। यदि अति मति चाहसि सुगति तदि तुलसी करु प्रेम॥ करता शुचि सुरसरिसुता शशि सारँग महि जान। आदि अन्तसह प्रथम युत तुलसी समुझु न आन॥ गिरिजागति कल आदि इक हरि नचब युधि जान। आदि अन्त भजु अन्त पुनि तुलसी शुचि मन मान॥ ऋतुपतिपद पुनि पङ्क्तियुत प्रथम आदि पुर लेहु। अन्त हरण पद द्वितियमहँ मध्य वरण नह नेहु॥ बाहन शेष सुपक्षु परव भरत नगर युत जान। हरि भरि सरित विपर्य्य करि आदि मध्य अवसान॥ तुलसी उडुगणको वरण बनज सहित दोउ अन्त। ताकहँ भजु संशयशमन रहित एक कल अन्त॥ वारिज वारिज वरण वर वरणत तुलसीदास। आदि आदि भजु आदि पद पाये परम प्रकाश॥ भजु तुलसी कुलिशान्तकहँ सह अगार तजि काम। सुखसागर नागर ललित बलो भलो परधाम॥ चञ्चल सहितल चञ्चला अन्त अन्त युत ज्ञान। सन्त शास्त्र सम्मत समुझि तुलसी करु परमान॥ आदि वसन्त इकार दे आशय ता-

सु विचार । तुलसी तासु शरण परे कालु न भयो उबार ॥ धरा धराधर वरण युग शरण हरण भवभार । करन सतर तर परम पद तुलसी परमाधार ॥ वरन धनञ्जय सूनुपति चरण शरण रति नाहि । तुलसी जगवञ्चक बिहठि किये विधाता ताहि ॥ तुलसी रजनी पूर्णिमा हार सहित लखि लेहु । आदि अन्त युत जानि कहि तुलतरसनलसनेहु ॥ भानु गोत तिमि तासु पति कारण अति हित जाहि । ज्ञान सुगति युत सुखसदन तुलसी मानत ताहि ॥ भजु तुलसी औघादिकहँ सहित तत्त्व युत अन्त । भव आयुर्जय जासुबल मन चल अचल करन्त ॥ देत कहा नृप काजपर लेत कहा दूत राज । अन्त आदि युत सहित भजु जो चाहसि शुभ काज ॥ चन्द्रवर्ण भजु गुण सहित समुझि अन्त अनुराग । तुलसी जो यह बन परै तौ तव पूरण भाग ॥ जिनके हरि बाहन नहीं दधिसुत सुत जेहि नाहिं । तुलसीते नर तुच्छ हैं विना समीर उड़ाहिं ॥ रवि चञ्चल अरु ब्रह्म द्रव बीच सुबास विचारि । तुलसिदास आसन करे अवनिसुता उर धारि ॥ बन वनिताहगकोपमा युत कच सहित विवेक । अन्त आदि तुलसी भजहु परिहरि मत कर टेक ॥ उर्वी अन्तहु आदि युत कुल गोभी कमलादि । कै विपर्य्यं ऐसेहिं भजहु तुलसी शमन विषाद ॥ तौ तोहिकहं सब कोउ सुखद करहि कहा तव पाँच । हरव तृतिय वारिज वरण तजव लीन सुनु साँच ॥ तजहु सदाशुभ आश अरि भजु सुमनस अरिकाल॥ सजु मतईश अवन्तिका तुलसी विमल विशाल ॥ एतवन्त वरवरणयुग सेत जगत सब जान । चेत सहित सुमिरण करत हरत सकल अघखान ॥ मैत्रीवरणयकारको सहसर आदि विचारि । पञ्चवर्ग गहियुत सहित तुलसी ताहि सँभारि ॥ हलयम मध्य समानयुत याते अधिक न आन ॥

तुलसी ताहि बिसारि शठ भरमत फिरत भुलान ॥ कौन जाति सीतासती को दुखदायक बाम । को कहिये शशिकर दुखद सुखदायक को राम ॥ को अङ्कुर गुरुवागवर शिवहरको अभिमान करताको अजजगतको भरताको हरिजान ॥ सरतेय सरजीव-गुण करु तेहि दृढ़पहिचान । पञ्चवर्ग गहि युतसहित तुलसी ताहि समान ॥ होत हरष का पाय धन विपति तजे का धाम ॥ दुखदा कुमति कुनारि तर खति सुखदायक राम ॥ बीर कवन सह मदनशर धीर कवन रतराम । कवन क्रूर हरिपदविमुख को कामी वशबाम ॥ कारण को कंजीव को खंगुण कह सब कोय । जानतको तुलसी कहत सो पुनि आवन होय ॥ तुलसी वरण विकल्पको औचप त्रितिय सकेत ॥ अब समुझै जड़ सरित नर समुझै साधु सचेत ॥ जासु आसु सरदेवको अरु असार हरु वाम । सकल दुखद तुलसी तजहु मध्य तासु सुखधाम ॥ चञ्चल तियभजु प्रथम हरि जो चाहसि परधाम । तुलसी कहहि सुजन सुनहु यही सयानप काम ॥ कलिशधर्म्म युग अन्तयुत भजु तुलसी तजु काम ॥ अशुभहरण संशयशमन सकल कला गुणधाम ॥ श्रीकरको रघुनाथहर अनयश कह सब कोय । सुख-दाको जानत सुमति तुलसी समतादोय ॥ वैरमूलहित हरवचन प्रेममूल उपकार । दोहा सरल सनेहमें तुलसी करै विचार ॥ शाग कवन गुरु लघु जगत तुलसी और न आन । श्रेष्ठाको हरि-भक्तिसम को लघु लोभ समान ॥ चरण द्वितिय नाशक निरय तुलसी अन्तरसार । भजहु सकल श्रीकरसदन जनपालक खल-सार ॥ चपश्रेय सस्वर सहित यमयुत दुखद न आन । तुलसी हलयुतते कुशल अन्तिकार सहजान ॥ तुलसी यमगण बोध बिन कहु किमि मिटै कलेश । ताते सद्गुरुशरण गहु जाते पद-उपदेश ॥ भगण जगण कासों करसि रानभयन नहिं कोय ।

तुलसी पतिपहिचान बिन कोउ तुलकबहुँ लहोय॥ तुलसी लगण-बिहीन नर सदा नगणके बीच। तिनहिं जगण कैसे लहै परे सगणके बीच॥ इन्द्ररमणि सुरदेव ऋषि रुक्मिणिपति शुभ जान। भोजनदुहिता काक अलि आनँद अशुभ समान॥ को हित सन्त अहित कुटिल नाभकको हित लोभ। पोषक तोषक दुखद अरि शोषक तुलसी चोभ॥ सदा नगण पद प्रीति यहि जानु नगण सम ताहि। जगण ताहि जययुत रहत तुलसी संशय नाहि॥ भगण भक्ति कह भरम तजि लगण सगण विधि होय। सगण सुभाय ससुझि तजो भजे न दूषण कोय॥ श्रीगज आसनजूतजू बिहरत तीर सुधीर। यज्ञ पाय मैत्राणपद राजत श्रीरघुवीर॥ बाणयुतजू तट निकट विहरत रामसुजान। तुलसी करकमलन ललित लसत शरासन बान॥ मृदुमेचक शिरुह रुचिर शोभतिलक भ्रू बङ्क। धनुशर गहि जनु तहितयुत तुलसी लसत मयङ्क॥ हंस कमल बिच वरणयुत तुलसी अतिप्रिय जाहि। तीनलोकमहँ जो भजे लहै तासु फल ताहि॥ आदि महै अन्तहु महै मध्य रहै तेहिजान। अनजाने जड़जीव सब ससुझै सन्तसुजान॥ आदि रहै मध्ये रहै अन्त रहै सो बात। रामविमुखके होत है रामविमुखते जात॥ ललित चरण कटि कर ललित लसत ललित बनमाल। ललित-चिबुक द्विज अधरसह लोचन ललित विशाल॥ भरणहरणअध्यै-अमल सहित विकल्पविचार। कह तुलसी मति अनुहरत दोहा अर्थ अपार॥ वर्णिठादिलङ्कारमहँ सङ्केतादि सुरीति॥ कहे बहुरि आगे कहब ससुझब सुमतिविनीति॥ कोष अलङ्कृत सन्धि गति मैत्रीवरण विचार। हरण भरण सुविभक्ति भल कविहि अर्थ निरधार॥ देशकाल करताकरम बुधि विद्यागतिहीन। ते सुरतरु तर दारदी सुरसरितीर मलीन॥ देशकाल गतिहीन जे

करताकर मनज्ञान । तेपिमर्थ मगु पगुधरहिं तुलसी श्वान समान अधिकारी सब वोसरो भलोजानिबो मन्द । सुधासदन बसुबारहो चौथो अथवाचन्द ॥ नरवर नभ सरवर सलिल विनय बनज विज्ञान । सुमति शुक्तिका शारदा स्वाती कहहिं सुजान ॥ शम दम समता दीनता दानदयादिक रीति । दोषदुरित हरदर दरड रवरविविमल विनीति ॥ धरमधुरीण सुधीरधर धारनवरपर-पोर । धराधरा धरसम अचल बचन न बिचल सुधीर ॥ चौंतिस-के प्रस्तारमें अर्थभेद परमान । कहहु सुजन तुलसी कहहिं या बिधिते पहिचान ॥ बेद बिषम कवरण सतर सुतर रामको रीति। तुलसी भरत न भरिहरत भूलि हरहु जनि प्रीति ॥ बनते गुण-कहँ जानिये ताते हगदिग तीन। तुलसी यह जिय समुझिकरि जगजित सन्त प्रवीन ॥ चन्द्रअनल नहिं है कहूँ झूठो विना विवेक। तुलसीते नर समुझि हैं जिनहिं ज्ञानरस एक॥ सतसैया तुलसी सतर तमहर परपर देत। तरिल अविद्या जनदुरित वर-तुलसम करि लेत ॥

इति तृतीयः सर्गः ३ ॥

त्रिविध भौतिको शब्द वर विखटन लट परसान। कारण अविरल जल पियत तुलसी अविध भुलान ॥ दिगभ्रम जा विध होत है कौन भुलावत ताहि। जानि परत गुरु ज्ञानते सब जग संशय माहिं॥ कारण चारि विचारु वर वरणन अपर न आन। सदा सोउ गुण दोषमें लखि न परत गुण ज्ञान॥ इह करतब सब ताहिको यहिते यह परमान। तुलसी मर-म न पाइ हो बिन सदगुरु वरदान॥ दिगभ्रम कारण चार ते जानहिं सन्त सुजान। ते कैसे लखि पाइ हैं जे वहि विषम भुलान॥ सुख दुख कारणसा भयो रसनाको सुत वीर।

तुलसी सो तव लखि परै करै कृपा वरधीर॥ अपने खोदे कूपमहँ गिरे यथा दुख होइ। तुलसी सुखइ ससुझि हिये एचत जगत सब कोय॥ ता विधिते अपनो विभव दुख सुख दे करतार। तुलसी कोउ कोउ सन्त वर कीन्हे विरचि बिचार॥ रसनाहीके सुत उपर करत करनतर प्रीति। तेहि पाछे जग सब लगे ससुझ न रीति अरीति॥ माया मन जिव ईश भखि ब्रह्मा विष्णु महेश। सुर देवी औ ब्रह्मलौं रसना सुत उपदेश॥ करणधार वारिधि अगम को गम करै अपार। जन तुलसी सतसङ्गबल पाये विशद विचार॥ गहि सुवेल विरले ससुझि वहि गय अपर हजार। कोटिन बूड़े खबरि नहिं तुलसी कहहिं विचार॥ श्रव न सुनत देखत नयन तुलत न विविध विरोध। कहहु कहौ केहि मानिये केहि विधि करिय प्रबोध॥ श्रवणात्मक ध्वन्यात्मक वरणात्मक विधि तीन। त्रिविध शब्द अनुभव अगम तुलसी कहहिं अधीन॥ कहत सुनत आदिहि वरण देखत वरणविहीन। दृष्टिमान चर अचरगण एकहि एकन लीन॥ पञ्च भेद चरगण विपुल तुलसी कहहिं विचारि। नर पशु स्वेदज खगज खग क्रमि बुध मत निरधारि॥ अति विरोध तिनमहँ प्रबल प्रकट परत पहिचान। अस्थावर गति अपर नहिं तुलसी कहहिं प्रमान॥ रोम रोम ब्रह्माण्ड बहु देखत तुलसीदास। बिन देखे कैसे कोऊ सुनि मानै विश्वास॥ वेद कहत जहँलगि जगत तेहिते अलग न आन। तेहि अधार व्यवहरत लखु तुलसी परम प्रमान॥ सरषप सूझत जासुकहँ ताहि सुमेरु असूझ। कहेउ न ससुझत सो अबुध तुलसी विगत विसूझ॥ कहत अवर ससुझत अवर गहत तजत कछु और। कहेउ सुने ससुझत नहीं तुलसी अति मतिबौर॥ देखो करै अदेख इव अनदेखो विश्वास। कठिन प्रबलता

मोहकी जलकहँ परम पियास ॥ सोई सेमर सोइ सुवा सेवत पाइ बसन्त। तुलसी महिमा मोहकी विदित बखानत सन्त ॥ सुन्यो सवन देख्यो नयन संशय शमन समान। तुलसी समता असम्भव कहत आनकहँ आन ॥ बसहा भव अरि हित अहित सोपि न समुझत हीन। तुलसी दीन मलीनमति मानत परम प्रवीन ॥ अटकत पर अद्वैतता अटकत ज्ञान गुमान। सटकत विलरनते विहटि फटकत तिमु अभिमान ॥ जो चाहत तेहि बिनु दुखित सुखित रहित तेहि होइ। तुलसी सो अतिशय अगम सुगम रामते सोइ ॥ मात पिता निज बालकहि करहिं इष्ट उपदेश। सुनि माने विधि आप जेहि निज शिर सहे कलेश ॥ सबसों भलो मनाइबो भलो होनकी आस। करत गगनके गेडुआ सो शठ तुलसीदास ॥ विलिमिसु देखत देवता करणी समता देव। सुये मार अविचाररत स्वारथ साधक एव ॥ बिनहि बीज तरु एक भव शाखा दल फल फूल। को बरणै अतिशय अमित सब विधि अकल अतूल ॥ शुक पिक मुनिगण बुध विबुध फल आश्रित अति दीन। तुलसी ते सब विरदहित सो तरु तासु अधीन ॥ को नहिं सेवत आय भव को न सेय पछताय। तुलसी बादहि पचत है आपहि आप नशाय ॥ कहत विविध फल विमल तेहि वहत न एक प्रमान। भरम प्रतिष्ठा मानि मन तुलसी कथत भुलान ॥ मृगजल घट भरि विविध विधि सींचत नभतरुमूल। तुलसी मन हरषित रहत बिनहि लहे फल फूल ॥ सोपि कहहिं हमकहँ लह्यो नभतरुको फल फूल। ते तुलसी तिनते विमल सुनि मानहिं मुद मूल ॥ तेपि तिन्हैं याचहिं विनय करि करि बार हजार। तुलसी गाडरको ढरन जाने जगत विचार ॥ शशि कर सग रचना किये कत शोभा सर-

सात। स्वर्ग सुमन अवसन्त खलु चाहत अचरज बात॥ तुलसी मोल न बूझई देखत देखन जोय। तिन शठके उपदेशका करब सयाने कोय॥ जो न सुनै तेहि का कहिय कहा सुनाइय ताहि। तुलसी तेहि उपदेशही तासु सरिस मति जाहि॥ कहत सकल घट राममय तौ खोजत केहि काज। तुलसी कह इह कुमति सुनि उर आवत अति लाज॥ अलख कहहिं देखन चहहि ऐसे परम प्रवीन। तुलसी जग उपदेशही बनि बुध अबुध मलीन॥ हहरत हारत रहित विद रहत धरे अभिमान। ते तुलसी गुरु आव नहिं कहि इतिहास पुरान॥ निज नैनन दीसत नहीं गही आँधरे बाह। कहत मोहवश तेहि अधम परम हमारे नाह॥ गगनवाटिका सींचही भरि भरि सिन्धुतरङ्ग। तुलसी मानहि मोद मन ऐसे अधम अभङ्ग। दृषद करत रचना विहरि रङ्ग रूप सम-तूल। विहग बदन विष्ठा करे ताते भयो न तूल॥ चाह ति-हारो आपते मानन आनन आन। तुलसी करु पहिचान पति याते अधिक न आन॥ आतमबोध विचार इह तुलसी करु उपकार। कोउ कोउ रामप्रसादते पावत परमतपार॥ जहाँ तोष तहँ राम हैं राम तोष नहिं भेद। तुलसी देखि गहत नहीं सहत विविध विधि खेद॥ गोधन गजधन बाजिधन और रतनधनखान। जब आवै सन्तोषधन सब धन धूरि समान॥ कुथि रति अटत विमूढ़ लट घट उदघटत न ज्ञान। तुलसी रटत हटत नहीं अतिशय गति अभिमान॥ भूभुवङ्ग गत दाम भुव काम न विविध विधान। तो लन वर्त्तमान यत तत तुलसी परमान॥ भो उर सुक्ति विसव पढ़ि मनगत प्रकट लखात। मन भो उर अति सुक्तिते बिलग बिजानब तात॥ रामचरण पहिचान बिनु मिटो न मनको दौर।

जन्म गँवाये बादही रटत पराये पौर॥ सुनै बरण मानै बरण बरण बिलग नहिं ज्ञान। तुलसी सुगुरुप्रसाद बल परै बरण पहिंचान॥ बिटप बेलिगण बागके सालाकार न जान। तुलसी ता विधि विद बिना करता राम भुलान॥ करतब ही सो कर्म है कहँ तुलसी परमान। करणहार करतारसो भोगै कर्म निदान॥ तुलसी लट पदते भटक अटक अपित नहिं ज्ञान। ताते गुरु उपदेश बिनु भरमत फिरत भुलान॥ ज्यों बरदा बनिजारके फिरत घनेरे क्लेश। खाँड़ भरे भुस खात हैं बिन गुरुके उपदेश॥ बुध्वा वैरन अनथ पद ख्वपिन पदारथ लीन। तुलसी तेहि रासभ सरिस निज मन गणहि प्रवीन॥ कहत विविध देखे बिना गहत अनेक न एक। ते तुलसी स्रोनहिं सरिस बाणी बदहिं अनेक॥ बिन पाये परतीत अति करत यथारथ हेत। तुलसी अबुध अकाश दूत भरि भरि सूठौ लेत॥ बसन वारि बाँधत बिहठि तुलसी कौन विचार। हानि लाभ विधि वाध बिनु होत नहीं निरधार॥ काम क्रोध मद लोभको जबलगि मनमें खान। का पण्डित का मूरख दोनों एक समान॥ इत कुलकी करणी तजे उत न भजे भग-वान। तुलसी अधवरके भये ज्यों बधूरको पान॥ कीर सरिस बाणी पढ़त चाखन चाहत खाँड़। मन राखत वैराग-महँ घरमों राखत राँड़॥ रामचरण परचै नहीं बिन साधन पद नेह। मूँड़ मुड़ाये बादहीं भाँड़ भये तजि गेह॥ काह भयो बन बन फिरे जो बनि आयो नाहिं। बनते बनते बनि गयो तुलसी घरहीमाहिं॥ जो गति जानै वरणकी तन गति सो अनुमान। बरण बिन्दु कारण यथा तथा जानु नहिं आन॥ वरण योग अत्र नाम जग जानु भरमको मूल। तुलसी करता है तुही जानु मानु जनि भूल॥ नाम जगत सम समुझ जग

वस्तु न करि चित चैन। विन्द गये जिमि गैनते रहत ऐनको ऐन॥ आपुहि ऐन विचारु विधि सिद्धि विमल गति मान। आन वासना विंदुसम तुलसी परम प्रमान॥ धन धन कहे न होत कोउ समुझि देखु धनमान। होत धनिक तुलसी कहत दुखित न रहत जहान॥ हिमको मूरतिके हिये लगत नीरको प्यास। लगत शब्द गुरु तरनिकर सोमें रही न आस॥ जाके उरवर वासना भई भाष कछु आन। तुलसी ताहि विड-म्बना कहि विधि कथहि प्रमान॥ रुजत न भव परचै विना भेषज करि किमि कोय। जान परे भेषज करे सहज नाश रुज होय॥ मानस व्याध कुचाह तव सदगुरु वैद समान। जासु वचन अलवल अवल होत सकल रुज हान॥ रुचि वाढ़े सत-सङ्गमहँ नीति चुधा अधिकाय। होत ज्ञानबल पीन खल वृजिन विपति मिटि जाय॥ शुक्लपच्च शशि स्वच्छमी कृष्णा-पच्च द्युतिहीन। वढ़त घटत विधि भाँति विचि तुलसी कह-हि प्रवीन॥ सतसङ्गति सितपच्च सम असित असन्त प्रसङ्ग। जानु आपकहँ चन्द्र सम तुलसी वदन अभङ्ग॥ तीरथपति सतसङ्ग सन भक्ति देवसरि जान। विधि उलटी गति रामकी तरणिसुता अनुमान॥ वर मेधा मानहु गिरा धीर धर्म्म न-ग्रोध। मिलन त्रिवेणी मनहरणि तुलसी तजहु विरोध॥ समझव सव मज्जन विशद मल अनीत गद धोय। अवश मिलन संशय नहीं सहज रामपद होय॥ चेम विमल वारा-णसी सुरअपगा सम भक्ति। ज्ञानविश्वेश्वर अति विशद लसत दया सह शक्ति॥ वसत चेम गृह जासु मन वाराणसी न दूरि। विलसित सुरसरि भक्ति जहँ तुलसी नय कृत भूरि॥ सित काशी मगहर असित लोभ मोह मद काम। हानि लाभ तुलसी समुझि बास करहु वसुयाम॥ गये पलटि आवे

नहीं है सो कछ पहिचान। आजु जेद सो काल है तुलसी अर-स न मान॥ वर्त्तमान आधीन दोउ भावी भूत विचार। तुलसी संशय मनन कछ जो है सो निरसार॥ मानस उर वर सम मधुर रामसुयश शुचिनीर। उठेउ वृजिन बुधि मल भई बुधि नहिं अगम अधीर॥ अलङ्कार कवि रीति युत भूषण दूषण रीति। वारिजात वरणत विविध तुलसी विमल बिनीति॥ त्रिनै विचार सुहिर्द ता सो पराग रस गन्ध। कामादिक तेहि संरल सत तुलसी घाट प्रबन्ध॥ प्रेम उमँग कवितावली चली सरित शुचिधार। राम बराबरि मिलन हित तुलसी हरष अपार॥ तरल तरङ्ग सुछन्द वर हरत द्वैत तरु मूल। वैदिक लौकिक विधि विमल लसत विशदवर कूल॥ सन्तसभा विमला नगरि सिगरि सुमङ्गलखानि। तुलसी उर सुरसरिसुता लसत सुथल अनुमानि॥ सुक्त सुसुकूर विषद श्रोता विविध प्रकार। ग्राम नगर पुरयुग सुतट तुलसी कइहिं बिचार॥ बाराणसी-विराग नहिं शैलसुता मन होय। तिमि अवधहि सरयु न तजै कहत सुकवि सब कोय॥ कहब सुनब समुझब पुनः सुनि संसु-झायब ज्ञान। श्रमहर घाट प्रबन्धवर तुलसी परम प्रमान॥

इति चतुर्थःसर्गः॥ ४॥

यतन अनूपम जासु वर सकल कला गुणधाम॥ अविनाशी अब यह अमल भो यह तनु धरि राम॥ सदा प्रकाश सरूपवर अलख न अपर न आन। अप्रमेय अद्वैत अज याते दुरत न ज्ञान॥ जानहिं हंसा रसमकहँ तुलसी सन्त न आन। जाकी कृपा कटाक्षते पाये पदनिर्वान॥ तजत सलिल अपि पुनि गहत घटत बढ़त नहिं रीति। तुलसी यह गति उर निरखि करिय रामपद-

प्रीति॥ चुम्बक इरहन सेति जिम सन्तन हरि सुखधाम। जान तिरीच्छ सम लफरि तुलसी जानत राम॥ भरत हरत दरशत लखहिं पुनि अदरश्य सबकाहु॥ तुलसी सुगुरु प्रसादबर होत परमपद ताहु॥ यथा प्रत्यक्ष सरूप बहु जानत है सब कोय॥ तथाहि लै गतिको लखब असमञ्जप अति सोय॥ यथा सकल आपि जात अप रविमण्डलके माहिं। मिलत तथा जिव रामपद होत तहांले नाहिं॥ कर्मकोष सँग लै गयो तुलसी अपनी बानि। जहां जाय बिलसे तहां परे क ां पहिचानि॥ ज्यों धरणीमहँ हेतु सब रहत यथा धरि देह। त्यों तुलसी लै राममहँ मिलत कबहुँ नहिं एह॥ शोषक पोषक समुझ शुचि राम प्रकाशसरूप। यथा तथा बिन देखिये जिमि आदरश अनूप॥ कर्म मिटाये मिटत नहिं तुलसी किये बिचार। करतब हीके फेर है या बिधि सार अधार॥ एक किये हो दूसरो बहुरि तीसरो अङ्ग। तुलसी कैसेहु ना नशै अतिशय कर्म तरङ्ग॥ इन दोउनते रहत भो कोउ न राम तजि आन। तुलसी यह गति जानिहै कोउकोउ सन्तसुजान॥ सन्तनको लै अभिसदन समुझहिं सुगति प्रवीन। कर्मबिपर्यय कबहुँ नहिं सदा रामरसलीन॥ सदा एकरस सन्त सिय निश्चय निश्चिकर जान॥ रामदिवाकर दुखहरण तुलसी शीलनिधान॥ सन्तनकी गति ऊरविजा जानहु शशि परनाम। रमित रहत रसमें सदा तुलसी रति नहिं आन॥ जातरूप जिमि अनल मिलि ललित होत लन आन॥ सन्तशील कर सोय तिमि लसहिं रामपद पाय॥ आपुहिं बाँधत आपु हठि कौन छुड़ावत ताहि॥ सुखदायक देखत सुनत तदपि सो मानत नाहिं॥ जौन तारते अधम गति ऊर्द्ध तौन गति जात। तुलसी मकरीतन्त इव कर्म न कबहुँ नशात॥ जहां रहत तहँ सह सदा तुलसी तेरी बानि। सुधरै बिधिवश होय जब सतसङ्गति पहिचानि। रवि रजनीश बरालधा

इह अस्थिर अस्थूल । सूक्ष्म गुणको जीवकर तुलसी सो तनमूल ॥ आवत अपर वितै यथा जात तथा रविमाहिं ॥ जहँते प्रकटत ही दुरत तुलसी जानत ताहि ॥ प्रकट भये देखत सकल दुरत लखत कोउ कोय । तुलसी यह अतिशय अगम बिन गुरु सुगम न होय । या जग जे नयहीन नरवरवस दुखमगजाहि । प्रकटत दुरत महादुखी कहँलगि कहियत ताहि ॥ सुखदुख मग अपने गहे मगकेहु गहत न धाय । तुलसी रामप्रसाद बिनु सो किमि जानो जाय ॥ महिते रवि रविते अवनि सपनेहु दुख कहुँ नाहिं । तुलसी तबलगि दुखित अति शशिमशु लहत न ताहिं ॥ सन्तनकी गति शीतकर लेश कलेश न होय । सो सियपद सुखदा सदा जानु परमपद सोय ॥ तजत अमिय शशि जानि जग तुलसी देखत रूप । गहत नहीं सबकहँ बिदित अतिशय अमल अनूप ॥ शशिकर सुखद सकल जगत को तेहि जानत नाहिं । कोक कमलकर दुखदकर तदपि दुखद नहिं ताहि ॥ बिन देखे समुझे सुने सोउ भौ मिथ्यावाद । तुलसी गुरु गमकै लखे सहजहि मिटे विषाद ॥ वरषि विश्व हरषित करत हरत ताप अघप्यास । तुलसी दोष न जलदकर त्यों जड़ करत जवास ॥ चन्द्र देत अमि लेत विष देखहु मनहि बिचार । तुलसी तिमि सिय सन्तवर महिमा विशद अपार ॥ रसम विदित रवि रूप लखु शीत शीतकर जान । लसत योगयशकार अव तुलसी समझ समान ॥ लेति अवनि रविअंशकहँ देति अमिय अपसार । तुलसी सूक्ष्मको सदा रवि रजनीश अधार ॥ भूमि भानु अस्थूलअप सकल चराचर रूप । तुलसी बिन गुरु ना लहै यह मत अमल अनूप ॥ तुलसी जे लयलीन नर ते निशिकर तनलीन । अपर सकल रविगत भये महाकष्ट अतिदीन ॥ तुलसी कवनेहुँ योगते सतसङ्गति जब होय । राम मिलन संशय नहीं

कहहिं सुमति सब कोय ॥ सेवक पद सुखकर सदा दुखद सेव्य-पद जान । यथा विभीषण रावणहि तुलसी समुझ प्रमान ॥ शीत उष्णाकर रूपयुग निशिदिन कर करतार । तुलसी तिन-कहँ एक नहि निरखहु करि निरधार ॥ नहि नैनन काहू लख्यो धरत नाम सब कोय । ताते साँचो है समुझ झूठ कबहुँ नहि होय ॥ वेद कहत सब कोउ विदित तुलसी अमिय स्वभाव । करत पान अपि रुज हरत अविरल अमल प्रभाव ॥ गन्ध शीत अपि उष्णता सबहि विदित जग जान । महिबन अनल सुआनि लग बिन देखे परमान ॥ इनमहँ चेतन अमलअल विलखत तुलसीदास । सो पद गुरुउपदेश सुनि सहज होत परकास ॥ यहि विधिते वर बोध इह गुरु प्रसाद कोउ पाव । हैं ते अल तिहुँ कालमहँ तुलसी सहज प्रभाव ॥ काकसुतासुत-वासुता मिलत जननि पितु धाय । आदि मध्य अवसान गत चेतन सहज सुभाय ॥ समता स्वारथहीनते होत न विशद वि-वेक ॥ तुलसी यह तिनहीं फबे जिनहि अनेक न एक ॥ सब स्वा-रथ स्वारथ रटत तुलसी घटत न एक । ज्ञानरहित अज्ञानरत कठिन कुमनकर टेक ॥ स्वारथ सो जानहु सदा जासों विपति नशाय । तुलसी गुरुउपदेश बिन सो किमि जानो जाय ॥ कारज स्वारथ हित करै कारण करै न होय । मनवा कृषविशेषते तुलसी समझहु सोय ५० कारण कारज जानता सबकाहू पर-मान । तुलसी कारजकारजो सो तैं अपर न आन ॥ बिन करता कारज नहीं जानत हैं सब कोय । गुरुमुख श्रवण सुनत नहिं प्राप्ति कवन विधि होय ॥ करता कारण कारजहु तुलसी गुरु पर-मान । लोपत करता मोहवश ऐसो अबुध मलान ॥ अनिल सलिल विधियोगते यथा वीचि बहु होय । करत करावत नहिं कछुक करता कारण सोय ॥ छेम धरण करतार कर तुलसी

पति परधाम। सो बरतरता समन कोउ सब विधि पूरण-काम॥ कर्ता कारण सारपद आवै अमल अभेद। कर्म घटल अपि बहुत हैं तुलसी जानत वेद॥ स्वेदज जवन प्रकारले आयु करै कोउ नाहि। भये प्रकट तेहिको सुनो कौन विलोकत ताहि॥ भयो विषमता कर्म महँ समता किये न होय। तुलसी समता समुझ कर सकल मान मद धोय॥ समहित सहित समस्त जग सुहृद जान सबकाहु। तुलसी यह मत धारु उर दिन प्रति अति सुख लाहु॥ यह मनमहँ निश्चय धरहु है कोउ अपर न आन। कासन करत विरोध हठि तुलसी समुझ प्रमान॥ महि जल अनल सुअनिल नभ तहाँ प्रकट तव रूप। जानि जाय वर बोधते अति शुभ अमल अनूप॥ जोपै आकसमातते उपजे बुद्धि विशाल। नातो अति छलहीन है गुरुसेवन कछु काल॥ कारज युग जानहु हिये नित्य अनित्य समान। गुरु गमते देखहि सुजन कह तुलसी परमान॥ महि मयङ्क अहिनाहको आदि ज्ञान भो भेद। ता विधि तेई जीवकहँ होत समुझ विन खेद॥ परो फेर निज कर्म महँ भ्रम भवका यह हेत॥ तुलसी कहत सुजन सुनहु चेत न समुझ अचेत॥ नामकार दूषण नहीं तुलसी किये विचार। कर्मनकी घटना समुझि ऐसे वरण उचार॥ सुजन कुजन महि गत यथा तथा भानु शशिमाहि। तुलसी जानत हो सुखी होत समुझ विन नाहि॥ मातु तात भवरीति जिमि तिमि तुलसी गति तोरि। मात न तात न जानु तव है तेहि समुझ बहोरि॥ सर्व सकल तैं है सदा विस्तोषित सब ठौर। तुलसी जानहि सुहृद जे ते अति मति शिरमौर॥ अलङ्कार घटना कनक रूप नाम गुण तीन। तुलसी रामप्रसादते परखहि परमप्रवीन॥ एक पदारथ

त्रिविध गुण संज्ञा अगम अपार। तुलसी सुगुरुप्रसादते पावे पद निरधार॥ गन्ध न मूल उपाधि वहु भूपया तन गया जान। ओसा गुण तुलसी कहहिं समुझहिं सुमतिनिधान॥ जैसो जहां उपाधि तहँ घटित पदारथ रूप। तैसो तहां प्रभा समन गुणगण सुमति अनूप॥ जासु वस्तु अस्थिर सदा मिटत मिटावे नाहिं। रूप नाम प्रकटत दुन्त समुझि विलोकहु ताहि॥ पेष रूप संज्ञा कहव गुण सुविवेक विचार। इतनोई उपदेश वर तुलसी किये विचार॥ सदा सगुण सीता रमण सुखसागर वलधाम। जन तुलसी परखे परम पावे पद विश्राम॥ सगुण पदारथ एक नित निर्गुण अमित उपाधि। तुलसी कहहिं विशेषते समुझ सुगति सुठि साधि॥ यथा एकमहँ वेद गुण तामहँको कहु नाहिं। तुलसी वर्त्तत सकल हैं समुझत कोउ कोउ ताहि॥ तुलसी जानत साधुजन उदय अस्तगत भेद। विन जाने कैसे मिटे त्रिविध जनन जन खेद॥ संशय शोक समूल रुज देत अमित दुख ताहि। कहि अनुगत सपने त्रिविध चाहि परायण जाहि॥ तुलसी सांचो शाप है जब लगि खुलैं न नैन। सो तबलगि जबलगि नहीं सुनै सुगुरुवर वैन॥ पूरण परमारथ दरश परशत जौलगि आश। तौलगि खन उत्थान नद जबलगि जल न प्रकाश॥ तबलगि इमते सब बड़ो जबलगि है कछु चाह। चाहरहित कह को अधिक पाय परमपद याह॥ कारण करता है अचल अपि अनादि अजरूप। ताते कारज विपुलतर तुलसी अमल अनूप॥ करता जानि न परत है बिन गुरुवरपरसाद। तुलसी निज सुख विधि रहित केहि विधि मिटै विषाद॥ मृण्मय घट जानत जगत बिन कुलाल नहिं होय। तिमि तुलसी करता रहित कर्म करै कहुँ कोय॥ ताते करता ज्ञान कर जाते

कर्म प्रधान। तुलसी ना लखि पाइ हौ किये अमित अनु-मान॥ अनुमान साची रहित होत नहीं परमान। कह तुलसी प्रत्यक्ष जो सो कहु अपरको आन॥ मिति कारण करता सहित कारज किये अनेक। जौ करता जाने नहीं तौ कहु कवन विवेक॥ स्वर्णकार करत्ता कनक कारण प्रकट लखाय। अल-ङ्कार कारज सुखद गुण शोभा सरसाय॥ चामीकर भूषण अमित करता कह तब भेद। तुलसी जे गुरु गमरहित ताहि रमित अति खेद॥ तन निमित्त जहँ जो भयो तहां सोइ पर-मान। जिन जाने माने तहां तुलसी कहहिं सुजान॥ मृणमय भाजन विविध बिधि करता मन भव रूप। तुलसी जानेते सुख-द गुरु गम ज्ञान अनूप॥ सब देखत मृण भाज नहिं कोइ कोइ लखत कुलाल। जाके मनके रूप वह भाजन विलखु बिशाल॥ एकै रूप कुलालको माटी एक अनूप। भाजन अमित विशाल लघु सो करता मन रूप॥ जहां रहत वरतत तहां तुलसी नित्य स्वरूप। भूत न भावी ताहि कह अतिशय अमल अनूप॥ श्वास समीर प्रत्यक्ष अप स्वच्छा दरश लखात। तुलसी रामप्रसाद बिन अबिगति जानि न जात॥ तुलसी तल रहि जात है युग तन अचल उपाधि। यह गति तेहि लखि परत जेहि भई सुमति शुठि साधि॥ करता कारण कालके योग करम मत जान। पुनःकाल करता दुरत कारण रहत प्रमान॥

इति पञ्चमः सर्गः॥ ५॥

जल थल तन गत है सदा ते तुलसी तिहुँ काल। जन्म मरण समुझे बिना भाषत समन बिशाल॥ तैं तुलसी करता सदा कारण शब्द न आन। कारण संज्ञा सुख दुखद बिन गुरु तेहि किमि जान॥ कारजरत करता समुझ दुख सुख भोगत सोय। तुलसी श्री गुरुदेव बिन दुखप्रद दूर न होय॥ कारण शब्द स्वरूपमें संज्ञा गुण भव जान। करता दुलगुलते सुखद तुलसी अपर न आन॥ गन्ध बिभावरि नीर रस सलिल अनल गत ज्ञान। वायुवेगकहँ बिन लखे बुध जन कहहिं प्रमान॥ अनुस्वार अच्छर रहित जानत हैं सब कोय। कह तुलसी जहँलगि वरण तासु रहित नहिं होय॥ आदिहु अन्त-हु है सोई तुलसी और न आन। बिन देखे समुझे बिना किमि कोइ करै प्रमान॥ रहित बिन्दु सब वरणते रेफ सहित सब जान। तुलसी स्वर संयोगते होत वरण पद मान॥ अनु-स्वार सूच्छम यथा तथा वरण अलस्थ। जो सूच्छम अस्थूल सो तुलसी कबहुँ न सूल॥ अनिल अनल पुनि सलिल रज तनगत तनवत होय। बहुरि सो रजगत जल अनल सुरत सहित रवि सोय॥ और भेद सिद्धान्त यह निरखु सुमति कह सोय। तुलसी सुत भव योग बिन पितु संज्ञा नहिं होय॥ संज्ञा कह तब गुण समुझ सुनव शब्द परमान। देखब रूप बिशेष है तुलसी वेद बखान॥ होत पिताते पुत्र जिमि जानत को कहु नाहि। जबलगि सुत परसो नहीं पितु पद लहै न ताहि॥ तिमि वरखन संज्ञा करे वरण वरण संयोग। तुलसी होय न वरण कर जबलगि वरण वियोग॥ तुलसी देखहु सफलकहँ यहि बिधि सुत आधीन। पितु पद परखि सुदृढ़ भयो कोउ कोउ परम प्रवीन॥ जहँ देखो सुत पद सकल भयो पिता पद लोप। तलसी सो जानै सुई जासु अमोलिक चोप॥ स्यात सुबन

तिहुँलोकमहँ महाप्रबल अति सोइ। जो कोइ तेहि पाछे करै सो पर आगे होइ॥ तुलसी होत नहीं कछुक रहित सुवन व्यवहार। तोहीते अग्रज भयो सब विधि तेहि परचार॥ सुवन देखि भूले सकल भय अति परम अधीन। तुलसी जेहि समुझाइये सो मन करत मलीन॥ मानत सो साँचो हिये सुनत सुनावत वादि॥ तुलसीते समुझात नहीं जो पद अमल अनादि॥ जाहि कहत हैं सकल सो जेहि कह तव सो ऐन॥ तुलसी ताहि समुझि हिये अजहुँ करहु चित चैन॥ जो है सो नहीं कहत आन सब कोय। तुलसी रचना कहहु न काकहँ होय॥ यहि विधि परम विरुद्ध यथारथ बोध। अनुचित उचित लखाय उर तुलसी मिटै विरोध॥ सतसङ्गतिको फल यही संशय लहै न लेश। है अस्थिर शुचि सरल चित पावै पुनि न कलेश॥ जो सरबो पद सबन को यह लगि साध असाध। कवन हेतु उपदेश गुरु सतसङ्गति भव बाध॥ जो भावो कछु है नहीं झूठो गुरु सतसङ्ग। ऐसि कुमति ते झूंठ गुरु सन्तनको परसङ्ग॥ जौलो लखि नाहीं परत तुलसी परपद आप। तौलगि सोहि विवश सकल कहत पुत्रको बाप॥ जहँलगि संज्ञा वरण भो जासु कहेते होय। तो तुलसीसे है सबल आन कहा कहु होय॥ अपने नैनन देखि जे चलहिं सुमतिवर लोग। तिनहिं न बिपति बिषाद रुज तुलसी सुमति सुयोग॥ मृगा गगनचर ज्ञान बिन करत नहीं पहिचान। परवश शठ हठ तजत सुख तुलसी फिरत भुलान॥ काह कहो तेहि तोहिके जेहि उपदेशेउ तात। तुलसी कहत सो दुख सहत समुझ रहित हित बात॥ बिन काटे तरुवर यथा मिटै कवन बिधि छाँह। त्यों तुलसी उपदेश बिन निःसंशय कोउ नाँह॥ अपनो कर-

तब आप लखि सुनि गुनि आप विचार। तौ ताहिकहँ दुख-दा महा सुखदा सुमति अधार॥ ब्राह्मण वर विद्या विनय सुरति विवेकनिधान। पथ रति अनय अतीत मति सहित दया श्रुति मान॥ विनयछत्र शिर जासुके प्रतिपद पर-उपकार। तुलसी सो चत्री सही रहित सकल व्यभिचार॥ देश विनय मग पग धरै हरै कटुक घर वैन। सदय सदा शुचि सरलता होय अचल सुख ऐन॥ शूद्र चुद्र पथपरि हरै हृदय विप्रपद मान। तुलसी मन समता सुमति सकल जीव सम जान॥ हेतु वरण वर शुचि रहनि रसनि रास सुखसार। चाहन काम सुरा न रस तुलसी सुदृढ़ विचार॥ यथालाभ सन्तोषरत गृह भगवन सगरीत। सो तुलसी सुखमें सदा जिन तनु विभव विनीत॥ रहै जहां विचरैं तहां कमी कहूँ कछु नाहिं। तुलसी तहँ आनन्द सँग जात यथा सँग छांहिं॥ करत कर्म जेहिको सदा सो मन दुखदातार। तुलसी जो समुझै मनहिं तो तेहि तजै विचार॥ कहत सुनत समुझत लखत तेहिते विपति न जाय। तुलसी सबते विलग हैं जबते नहिं ठहराय॥ सुनत कोटि कोटिन कहत कौड़ी हाथ न एक। देखत सकल पुराण श्रुति तापर रहित विवेक॥ समुझत है सन्तोष धन याते अधिक न आन। गहत नहीं तुलसी कहत ताते अबुध मलान॥ कहा होत देखे कहे सुनि समुझे सब रीति। तुलसी जबलगि होत नहिं सुखद रामपद प्रीति॥ कोटिन साधनके किये अन्तरमल नहिं जाय। तुलसी जौ लगि सकल गुण सहित न कर्म नशाय॥ चाह बनी जबलगि सकल तबलगि साधन सार। तामहँ अमित कलेशकर तुलसी देख बिचार॥ चाह किये दुखिया सकल ब्रह्मादिक सब कोय। निस्पृहता तुलसी कठिन राम कृपावश होय॥

अपनो कमन आपकहँ भलो मन्द जेहि काल। तब जानब तुलसी भई अतिशय बुद्धि विशाल॥ तुलसी जबलगि लखि परत देह प्राणको भेद। तबलगि कैसेकै मिटै करम जनित बहु खेद॥ जोइ देह सोइ प्राण है प्राण देह नहिं दोय। तुलसी जो लखि पाय है सो निरदय नहिं होय॥ तुलसीतै झूठो भयो करि झूठे सँग प्रीति। है साँचो हो साँच जब गहै रामकी रीति॥ झूठो रचना साँच है रचत नहीं अलसात। बरजसहू लागरत बिहठि नेक न बूझत बात॥ करम खरी कर मोह थल अङ्क चराचर जाल। हरत भरत अर हर गनत जगत जोलखो काल॥ कहत काल किल सकल बुध ताकर यह व्यवहार। उतपति थिति लय होत है सकल तासु अनुहार॥ अङ्कुर किशलय दल विपुल शाखायुत वर मूल। फूलि फरत ऋतु अनुहरत तुलसी सकल सतूल॥ कहतब करतब सकल तेहि ताहि रहत नहि आन। जानन मानन आन विधि अनूमान अभिमान॥ हानि लाभ जय विधि विजय ज्ञान दान सनमान। खान पान शुचि रुचि अशुचि तुलसी विदित निधान॥ शालक पालक सम विषम रस भम गम गति ज्ञान। छट घट लट नट नादि जट तुलसी रहित न जान॥ कठिन करम करणी कथन करता कारक काम॥ काय कष्ट कारण करम होत काल सम शाम॥ खबर आतमा वोध वर खर बिन कबहुँ न होय। तुलसी खसम बिहीन जे ते खरतर नहिं सोय॥ चित रति बिज्ञ व्यवहरित बिधि अगम सुगम जय नीच। धीर धरम धारण हरण तुलसी परत न बीच॥ शब्द रूप विवरन विशद तासु योग भव नाम। करता रूप बहु जाति तेहि संज्ञा सब गुणधाम॥ नाम जाति गुण देखि कै भयो प्रबल उर भर्म। तुलसी गुरुउपदेश बिन जानि सकै

को मर्म ॥ अपन कर्म वर मानिकै आप बँधो सब कोय। कारजरत करता भयो आपन समुझत सोय ॥ को करता कारण लखै कारज अगम प्रभाव। जो जहँ सो तहँ तर हरष तुलसी सहज सुभाव ॥ तुलसी विन गुरुको लखै वर्त्तमान विधिरीत। कहु केहि कारणते भयो सूर उष्ण शशि शीत ॥ करता कारण कर्मते पर पर आतमज्ञान ॥ होत न विन उपदेश गुरु जो षट वेद पुरान ॥ प्रथम ज्ञान समुझै नहीं विधि निषेध व्यवहार उचितानुचितहि हेरि धरि करतव करिय सँभार ॥ जब मनमहँ ठहराय विधि श्रीगुरुवरपरसाद। इहि विधि परमातमं लखै तुलसी मिटै विषाद ॥ बरवस करत विरोध हठि होन चहत अकहीन। गहि गति वक वृक श्वान इव तुलसी परम प्रवीन ॥ साक कर्म भेषज विदित लखत नहीं मतिहीन। तुलसी शठ अकवश विहठि दिन दिन दीन मलीन ॥ करताहीते कर्म युग सो गुण दोष सरूप। करत भोग करतव यथा होय रङ्क किन भूप ॥ वेद पुराणरुशास्त्र युत निज बुधिबल अनुमान। निज निज करि करि दै बहुरि कहु तुलसी परमान ॥ विविध प्रकार कथन करै जाहि यथा भवमान। तुलसी सुगुरुप्रसादबल कोउ कोउ कहत प्रमान ॥ उर डर अतिलघु होनको भव लघु सुरति भुलान। स्वर्गलाह लखि परत नहि लखत लोहको हान ॥ नैनदोष निज कहत नहि विविध बनावत बात। सहत जानि तुलसी विपति तदपि न नेक लजात ॥ करत चातुरी मोहवश लखत न निज हित हान। शुक मरकट इव गहत हठ तुलसी परम सुजान ॥ दुखिया सकल प्रकार शठ समुझि परतही नाहिं। लखत न कराटक मीन जिमि अशन भषत भ्रम नाहिं ॥ तुलसी निज मनकामना चहत सुन्यकहँ सेय। वचन गाय सबकै विविध कहहु पयस केहि देय ॥ बातहि बात

हि बनि परै बातहि बात नशाय। बातहि आदिहि दोष भव बातहि अन्त बताय ॥ बातहिते बनि आवहू बातहिते बनि जात। बातहिते वर बर मिलत बातहिते बौरात ॥ बात बिना अतिशय बिकल बातहि ते हरषात। बनत बात बर बातते करत बात बरयात ॥ तुलसी जानु बात विन बिगरत हर इक बात। अनजाने दुख बातके जानिपरत कुशलात ॥ प्रेम वैर औ पुण्य अघ यश अपयश जय हान। बात बीज इन सबनको तुलसी कहहिं सुजान ॥ सदा भजन गुरु साधु द्विज जीव दया सम जान। सुखद सुनै रत सत्यव्रत स्वर्ग सप्तसोपान ॥ वञ्चक विधिरत नरतनय विधिहिंसा अतिलीन। तुलसी जगमहँ बिदित वर नरकनिशेनी तीन ॥ जे नर जग गुण दोषयुत तुलसी वदत बिचार। कबहुँ सुखी कबहूँ दुखित उदय अस्त व्यवहार॥ कारज जगके युगलतम काल अचल बलवान। त्रिविध विकल तेते हटहिं तुलसी कहहिं प्रमान ॥ अनुभव अमल अनूप गुरु कछुक शास्त्रगति होय ॥ बचै काल क्रम दोषते कहहिं सुबुध सब कोय ॥ सब विधि पूरण धामबर राम अपर नहिं आन। ताकी कृपाकटाक्षते होत हिये दृढ़ज्ञान ॥ सो स्वामी सो तर सखा सो वर सुखदातार। तात मात आपदहरण सो आसमय अधार ॥ सुखद दुखद कारज कठिन जानत को तेहि नाहिं। जानेहुपर बिन गुरुकृपा करतब बनत न काहिं ॥ तुलसी सकल प्रधान है वेद विदित सुखधाम। तामहँ समुझब कठिन अति युगलभेद गुणनाम ॥ नाम कहत सुख होत है नाम कहत दुख जात। नाम कहत सुख जात दुरि नाम कहत दुख खात ॥ नाम कहत वैकुण्ठसुख नाम कहत अवखान। तुलसी ताते उर समुझि करहु नाम पहिचान ॥ चारों चौदह अष्टदश रस समुझब भरिपूर। नामभेद समुझे बिना सकल समुझमहँ धूर

वार दिवस निशि मासासित असित वरष परमान। उत्तर दक्षिण आय रवि भेद सकलमहँ जान॥ कर्म शुभाशुभ मित्र अरि रोदन हँसन बखान॥ और भेद अति अमित है कहँ लगि कहिय प्रमान॥ जहँलगि जन देखब सुनब समुझाव-कहब सुरीत। भेदरहित कछु है नहीं तुलसी वदहिं विनीत॥ भेद याहि विधि नाममहँ बिनु गुरु जान न कोय॥ तुलसी कहहिं विनीत वर ज्यों विरञ्चि शिवहोय॥

इति षष्ठःसर्गः ६॥

तिनहिं पढ़े तिनहीं सुने तिनहिं सुमति परगास। जिन आशा पाछे करे गहे अलख नौसास॥ तबलगि योगी जगतगुरु जबलगि रहे निरास। जब आशा मनमें जगी जग गुरु योगी दास॥ हित पुनीत स्वारथ सबहि अहित अशुचि बिन-चाउ। निजमुख माणिक सम दशन भूमि परत औहाउ॥ निज गुणघटत न नागनग हर्षि न पहिरत कोल। गुञ्जा प्रभुभूषण करे ताते बढ़े न मोल॥ देइ सुमन करि वास तिल परिहरि खरि रस-लेत। स्वारथहित भूतल भरे मनमें चक तन सेत॥ अँसुवन पथिक निराशते तटभुइ सजल सरूप। तुलसी किन बञ्चे नहीं इन स्वरथ ल केकूप॥ तुलसी मित्र महासुखद सबहि मिलको चाउ। निकट भये विलसत सुखप एक कृपाकर छाउ॥ मित्र कोप बरतर सुखद अनहित मृदुल कराल॥ द्रुमदल शिशिर सुखात सब सह निदाघ अति लाल॥ खल नेरे गुण मान नहिं मेटहि दाता वोप॥ जिमि-जल तुलसी देत रवि जलद करत तेहि लोप॥ बरषत हरषत लोगसब करषत लखत न कोय। तुलसी भूपति भानुसम प्रजा भागवश होय॥ माली भानु कृशानु सम नीतिनिपुण महिपाल। प्रजा भागवश होहिंगे कबहिं कबहिं कलिकाल॥

समयपरे सुपुरुष नरन लघुकरि गनिय न कोय। नायक पीपर बीजसम बचैतो तरुवर होय॥ बड़े राम रत जगतमें के परहित चित जाहि॥ प्रेमपैज निबहौ जिन्हे बड़े सो सबही चाहि॥ तुलसी सन्तनते सुने सन्तत इहै विचार॥ तनधन चञ्चल अचल जग युगयुग परउपकार॥ ऊँचहि आपद बिभव वर नीचहि दत्त न होत॥ हानिवृद्धि द्विजराजकहँ नहिं तारागण कोय॥ बड़े रतहिं लघुके गुणहिं तुलसी लघुहि न हेत। गुञ्जाते मुक्ताअरुण गुञ्जा होत न श्वेत॥ होहिं बड़े लघु समय सह तो लघु सकहिं न काढ़ि। चन्द्र दूबरो कूबरो तऊ नखतते बाढ़ि॥ उरग तुरग नारी नृपति नरनीचो हथियार। तुलसी परखत रहब नित इनहिं न पलटत बार॥ दुरजन आप समान करि को राखै हितलागि। तपतलोय सह जाहि पुनि पलटि बतावत आगि॥ अन्नतन्त्र-तन्त्रीतिया पुरुष अश्व धन पाठ। पुनि गुण योगवियोगते तुरत जाहिं ये आठ॥ नीच निचाई नहिं तजै जो पावहि सतसङ्ग। तुलसी चन्दनविटप बसि विनविष भय न भुजङ्ग॥ दुरजन दरपणसम सदा करि देखो हिय दौर॥ सनमुखकी गति और है विमुख भये कछु और॥ मितके अवगुण मित्रको परपहँ भाषत नाहिं। कूपछाँह जिमि आपनी राखत आपहि माहिं॥ तुलसी सो समरथ सुमति सुकती साधु सुजान। जो बिचारि व्यवहरत जग खरचलाभ अनुमान॥ सीख सखा सेवक सचिव सुतिय सिखावन साँच॥ सुनि करिये पुनि परिहरिय परमनरञ्जन पाँच॥ पुष्टिहि निज रुचि काज करि रुष्टहिं काज बिगारि। तिया तनय सेवक सखा मनकेकण्टक चारि॥ नारि नगर भोजन सचिव सेवक सखा अगार॥ सरस परिहरे रङ्गरस निरस विषा-दविकार॥ दीरघ रोगी दारिदी कटुबच लोलुपलोग। तुलसी प्राण समानज्यों तुरित त्यागिबे योग॥ धाय लगे लोहा ललकि

खचिह लेइयनीच। समरथ पापीसों बरर तीन वेसाहो मीच॥ तुलसी स्वारथ सामुहे परमारथ तन पीठि॥ अन्ध कहे दुख पावकहि डिठियारे हियडोठि॥ अनसमझेने सोचवर अवसि समुझिये आप॥ तुलसी आपन समुझिबिन पलपलपर परिताप॥ कूप खनहिं मन्दिर जरत लावहिं धारि बबूर। बोये लुरचह समय बिन कुमतिशिरोमणि क्रूर॥ निडर अनय करि अनकुशल बोसबाहु सम होय। गयो गयो कह सुमतिजन भयो कुमति कह कोय॥ वहुसुत वहुरुचि बहुवचन बहु अचारव्यवहार इनको भलो मनाइबो इह अज्ञान अपार॥ अपयश योग कि जानको मणिचोरी कि कान्ह। तुलसीलोग रिझाइबो करसि कातिबो नान्ह॥ माँगि मधुकरी खात जे सोवत पाँव पसारि। पापप्रतिष्ठ बढ़ि परी तुलसी बाढ़ीरारि॥ लही आँखिकबआँधरहि बाँझ पूत कब जाय। कब कोढ़ी काया लही जगबहराइच जाय॥ या जगकी विपरीति गति काहि कहौ समुझाय। जल जलिगो झख बाधिगो जनतुलसी मुसुकाइ॥ कै जूझिबो कि बूझिबो दान कि कायकलेश। चारिचारु परलोकपथ यथा योगउपदेश॥ बुध कि मान सरवेद्बन सते खेत सब सींच॥ तुलसी इनिगति जानिबो उत्तम मध्यम नीच॥ सहि कुबोल सासति असम पाय अनट अपमान। तुलसी धर्म न परिहरहि ले वर सन्त सुजान॥ अनहित ज्यों परहित किये आपनहित तमजान॥ तुलसी चारुबिचारमति करिय काज सममान॥ मिथ्यामाहुर सजनकहँ खलहिं गरलसम साँच। तुलसी परसि परात जिमि पारद पावक आँच॥ तुलसी खलबाणी विमल सुनि समुझब हिय हेरि। रामराज बाधक भई मन्दमन्थरा चेरि दान दयादिक युद्धके बीरधीर नहिं आन। तुलसी कहहिं बिनीत इति ते नरवर परमान॥ तुलसी साथी विपतिके विद्याविनय-

विवेक। साहस सुकृत सत्यव्रत रामभरोसो एक॥ तुलसी असमयके सखा साहस धर्मविचार। सुकृतशील स्वभावरिजु रामशरण आधार॥ विद्याविनय विवेकरलि रीति जासु उरहोय। रामपरायण सो सदा आपदलाहिनकोय॥ बिनप्रपञ्च छलभीख-भलि नहिं फल किये कलेश। बामनबलिसों लीन्हिछलि दीन्ह सबहि उपदेश॥ बिबुधकाज बामन बलिहि छलो भलो जिय-जानि। प्रभुता तजि बशभेतदपि मनते गइनगलानि॥ बढ़ेबढ़े-तेछलकरें जनस कनौड़ेहोहिं। तुलसी श्रीपति शिर लसैं बलि-बामन गति सोहिं॥ खल उपकार विकारफलतुलसीगानजहान मेंखट मरकट बणिक बक कथा सत्य उपखान॥ ज्यों मूरख उपदेशके होते योग जहान। दुरयोधन कहबोधकिन आयेव्यास सुजान॥ हितपर बढ़त विरोध जब अनहितपर अपमान। रामविमुख विधि बामगति सगुन अनाय अमान॥ साहसही सिख कोपबश किये कठिन परिपाक। शठ सङ्कटभाजन भये हठि कुजती कपिकाक॥ मारि सोंह करि खोजलें करिमतसत्र बिन-लास। सुये नीच निमोचते जे इनके विश्वास॥ रीक आपनी बूक पर खीक विचारविहीन। तेउपदेशन मानहीं मोह महोदधि मीन॥ समुझि सुनीत कुनीतरत जागतहींरहसोय। उपदे-शिबोजगाइबो तुलसी उचित न होय॥ परमारथ पथमत समु-झि लसत विषय लपटान। उतरि चितातें अधजरी मानहुँ सती परान॥ तजत अमिय उपदेशगरु भजत विषय विषखान। चन्द्रकिरणभोखे पयस चाटत जिमि शठश्वान॥ सुरसदनन तीरथपुरिन निपट कुचालि कुसाज। मनहुं मवासे मारि कलि राजत सहित समाज॥ चोर चतुर बटमार भट प्रभु प्रिय भडुआभण्ड। सब भक्षौ परमारथी कलि सुपन्थ पाखण्ड॥ भील गँवार न्टपाल कलि जमन महामहिपाल। साम न

दाम न भेद कलि केवल दण्ड कराल॥ पाप पलीता कठिन गुरु गोला पुहमपाल॥ राग रोष गण दोषको साचो हृदय-सरोज। तुलसी विकसत मित्र लखि सकुचत देखि मनोज॥ वयर सनेह मयानपहि तुलसी जो नहिं जान। ते कि प्रेमपग मग धरत पशु बिन पूंछ बखान॥ रामदास यह जायके जो नर कथहि सयान। तुलसी अपने खाँड़हुँ खाक मिलावत खान॥ विविध एक विधि प्रभु अगण प्रनहि सँवारहि राउ। करते होत कृपाणको कठिन घोर घन घाउ॥ काल विलोकत ईशरुख भानु काल अनुहार। रवि हि राहु राजहि प्रजा बुध व्यवहरहि विचार॥ यथा अमल पावन पवन पाप सुसङ्ग कुसङ्ग। कहिय सुवास कुवास तिमि काल महीश प्रसङ्ग॥ भलउ चलत पथ शोच भय नृप नियोग नय नेम। कुतिय सुभूषण भूषियत लोह निवारित हेम॥ सुधा कुनाज सुनाज फल आम अशनसम जान। सुप्रभु प्रजाहित लेहि कर सामादिक अनुमान॥ पाके पकए विटप दल उत्तम मध्यम नीच। फल नर लहहि नरेश तिमि करि विचार मन बीच॥ धरणि धेनु चरि धरम तन प्रजा सुवत्स पन्हाय। हाथ कछु नहिं लागि है किये गोडकी गाय॥ टङ्क टङ्क ह्वै परत गिरि शाखा सहस खजूरि। गरहि कुनृप करि करि कुनय सो कुचाल भुवि भूरि॥ भूमि रुचिर रावणसभा अङ्गदपद महिपाल। धर्म राम नय सोनबल अचल होत तिहुँ काल॥ प्रीति रामपद नीतिरत धर्म प्रतीय स्वभाव। प्रभुहि न प्रभुता परिहरै कबहुँ वचन मन काय॥ करके कर मनके मनहि बचन बचन जिय जानि। भूपति भलहि न परिहरहि विनय विभूति सयानि॥ गोली बाण सुमन्त्र सुर समुझि उलटि गति देखु। उत्तम मध्यम नीच

प्रभु वचन विचारु विशेखु॥ भल सयाने सलिल हूत राख सीख अपनाव। बूड़त लखि डगमगत अति चपरि चहूँ-दिशि धाव॥ रच्यत राज समाज घर तन धन धर्म सुबाहु। सत्य सुमन्त्रिवहि सौंपि सुख बिलसहि निज नरनाहु॥ रसना मन्त्री दशन जन तोष पोष सब काज। प्रभु कैसे नृप दानवृक्ष बालक राज समाज॥ लकरी डोवा करछुली सरस काज अनुहारि। सुप्रभुजु गहहिं न परिहरहिं सेवक सखा विचारि॥ प्रभु समीप छोटे बड़े अचल होहिं बलवान। तुलसी विदित विलोकहीं कर अँगुली अनुमान॥ तुलसी भल बरणत बढ़त निज मूलहि अनुकूल। सकल भाँति सबकहँ सुखद दलन सहित बिन फूल॥ सधन सगुण सधरम सगण सजन सुसबल महीप। तुलसी जे अभिमान बिन ते त्रिभुवन-के दीप॥ साधन समय सुसिद्ध लहि उभय मूल अनुकूल। तुलसी तीनों समय सम ते महि मङ्गलमूल॥ रामायण अनु-हरत शिष जग भो भारत रीति। तुलसी शठकी को सुनै कलि कुचालिपर प्रीति॥ सुहित सुखद गुणयुत सदा काल योग दुख होय। घर धन जारत अनल जिमि त्यागे सुख नहिं कोय॥ तुलसी नरवर वस्त्र जिमि तिमि चेतन पट माहिं। नहिं सूखत पनहुतन सो समुझ सुबुध जन ताहि॥ तुलसी झगरा बड़ेनके बीच परहु जनि धाय। लहै लोह पाहन दोऊ बीच रूई जरि जाय॥ अर्थ आदिहन परिहरहु तुलसी सहित विचार। अन्त गहन सबकहँ सुने सन्त नमन सुखसार॥ गहु उपकार विचार पद मापकल हानि त्रिमूल। अहो जासु तुलसी यतन बिन जाने इव शूल॥ नीच निरावहिं निरस तरु तुलसी सींचहि ऊख। पोषत पयद समान जल विषय ऊख-के रूख॥ लोक वेदहूँ लौं दगी नाम मूलको पोच। धर्म-

राज यमराज यस कहत सकोच न शोच॥ तुलसी केवल रामके लागे लाख करोर। काक अभागे हगि भरे महिमा भय-उ न थोर॥ भलो कहहि जाने बिना कि अथवा अपवाद। तुलसी गाँड़र जानि जिय करहु न हरष विषाद॥ तन धन महिमा धर्म जेहि जाकहँ सह अभिमान। तुलसी जियत बिडम्बना परिणामहु गति जान॥ बड़ो बिबुध दरबारते भूमि भूप दरबार। जापक पूजक देखियत सहत निरादर भार॥ खग मृग मीन पुनीत किय बनहु राम नेपाल। क्रुनह बाल रावण घरहि सुखद बन्धु किय काल॥ रामलषण बिजयी भये सुनहु गरीबनिवाज। मुखर बालि रावण गये घरही सहित समाज॥ छारे टाट न दे सकहि तुलसी जे नर नीच॥ निदरहि बलि हरिचन्द्रकहँ किहुका करन दधीच॥ तुलसी निज कीरति चहहि परकीरतिकहँ खोय। तिनके मुंह मसि लागि है मिटहि न मरिहैं धोय॥ नीच चङ्गसम जानि-बो सुनि लखि तुलसीदास। ढील देत महि गिरि परत खैंचत चढ़त अकास॥ सहवासी काचो भषे पुरजन पाक प्रवीन। कालछेप किहि बिधि करै तुलसी खग मृग मीन॥ बड़े पाप बाढ़े किये छोटे करतब जात। तुलसी तापर सुख चहत बिधिपर बहुत रिसात॥ सुमति निवारहि परिहरहि दल सुमनहु संग्राम। सकल गये तनबिन भये साखी यादव काम॥ कलह न जानबि छोट करि कठिन परम परिणाम। लगत अनल अति नीच घर जरत धनिक धनधाम॥ जूझे ते भल बूझिबो भलो जीतते हारि। जहां जाइ जहँ डाइबो भलो जो करिय बिचारि॥ तुलसी तीन प्रकारते हित अनहित पहिचान। बरबस परे परोसबश परे मामला जान॥ दुर-जन बदन कमान सम बचन बिमुञ्चत तीर। सज्जन उर

बेधत नहीं क्षमा सनाह शरीर॥ कौरव पाण्डव जानिबो क्रोध क्षमाके सीम। पाँचहि मारि न सौ सके सयो निपाते भीम॥ जो मधु दीन्हे ते मरै माहुर देइ न ताउ। जग जिति हारे परशुधर हारि जिते रघुराउ॥ क्रोध न रसना खोलिये बरु खोलब तरवारि। सुनत मधुर परिणाम हित बोलब वचन विचारि॥ तुलसी मीठो समयते माँगो मिलेजु मीच। सुधा सुधाकर समय बिन कालकूटते नीच॥ पाहो खेती लगन बड़ि ऋण कुव्याज मग खेतु। बैर आपते बड़नते कियो पाँच दुख हेतु॥ रीझ खीझ गुरु देत शिष शिषहि सुसाहब साध। तोरि खाय फल होय भल तरु काटे अपराध॥ चढ़ो बबूरहि चङ्ग जिमि ज्ञानते शोक समाज। करम धरम सुख सम्पदा तिमि जानिबो कुराज॥ पेट न फूटत बिन कहे कहे न लागत ढेर। बोलब वचन विचारयुत समुझि सुफेर कुफेर॥ प्रीति सगाई सकल विधि बनिज उपाय अनेक। कल बल छल कलि-मल मलिन डहकत एकहि एक॥ दम्भसहित कलि धर्म सब छल समेत व्यवहार। स्वारथ सहित सनेह सब रुचि अनुहरत अचार॥ धातु बधो निरुपाधिवर सद्गुरु लाभ सुमीत। दम्भ दरश कलिकालमहँ पोथिन सुनब सुनीत॥ कायर कूर कपूत कलि घरघर सरिस उघार॥ ज्यों जगदीशतो अति भलो ज्यों महीशतो भार। जन्म जन्म तुलसी चहत राम-चरण अनुराग॥ का भाषाका संस्कृत विभव चाहिये साँच कामतो आवे कामरी का लै करिय कमाच॥ बरण विशद मुक्तासरिस अर्थ सूत सम तूल। सतसैया जग बरविशद गुण शोभा सुखमूल॥ वर माला बाला समलि उर धारै यत नेह। सुख शोभा सरसाय नित लहै रामपतिगेह॥ भूप कइहिं लघु गुणिन कहँ गुणी कहहि लघु भूप। महि गिरि गत दोउ

लखत जिमि तुलसी खरवस रूप॥ दोहा चारु विचारु चलु परिहरि वाद विवाद। सुकृत सीम स्वारथ अवधि परमारथ मरयाद॥

इति सप्तमः सर्गः॥

इति॥



विजया-वटिका।

अनेक प्रसिद्ध डाक्तर कविराज वैद्य कहते हैं ज्वरादि रोगोंकी ऐसी महौषध अबीतक और कभी ईजाद नहीं हुई। ज्वर होनेका लक्षण आ गया है शरीर हाथ पैरोंमें हड़फूटन होने लगी है जम्हाई आने लगी है आंखोंमें गर्मी आ गई है—ऐसे मौकेपर तीन तीन घण्टे पीछे एक एक करके दो विजया-वटिका मात्र खालेनेसे ज्वर आनेका भय नहीं रहेगा। विजया-वटिका तन्दुरुस्तीकी हालतमें खानेसे और रोगोंसे जकड़ जानेका भय नहीं रहता।

विजया वटिकाका मूल्यादि।

वटिका	संख्या	मूल्य	डाकमहसूल	पेकिङ्ग	वी० पी०
१नं०	१८ गोली	॥≈)	।)	≈)	⁄)
२नं०	३६ गोली	१≡)	।)	≈)	⁄)
३नं०	५४ गोली	१॥≈)	।)	≈)	⁄)
	बहुत बड़ी—गृहस्थोंके कामकी डलिया अर्थात्				
४नं०	१४४ गोली	४।)	।)	≡)	≈)

विजया वटिकाका अलौकिकत्व।

रोगीकी नाड़ीपर दिन रात ज्वर है, प्लीहाकी ऐंचातानी और यकृतसे तड़पड़ाता हुआ कष्ट पाता है, उसका हाथ, पांव, मुंह सूज गया हैं, आंखें पीली हो गई है; नाकसे नकसीर फूटती है—ऐसे विविध व्याधिग्रस्थ रोगी भी विजया-वटिकासे अच्छे हुए हैं और जब आदमीको प्लीहा, यकृत कुछ नहीं है, ज्वर भी नहीं है, अच्छा शरीर है,— उस समय भी विजया-वटिका सेवनसे भूख बढ़ेगी, शरीरका लावण्य बढ़ेगा। इसीसे विजया-वटिका विचित्र है।